



उन्नति का मूलमन्त्र
ब्रह्मचर्य



उन्नति का मूलमन्त्र—ब्रह्मचर्य

न तपस्तप इत्याहु ब्रह्मचर्यं तपोत्तमम् ।

ऊर्ध्वरिता-भवेद्यन्तु से देवो न तु मानुषः ॥

अर्थात्— जननेन्द्रिय-संयम द्वारा मनुष्य देवताओं के गुण को प्राप्त हो जाता है, उसका दैहिक, मानसिक और आध्यात्मिक शक्तियों का पूर्ण विकास होता है ।

“**ब्रह्मचर्य**” का अर्थ है—ब्रह्म (अर्थात् परमात्म तत्त्व) में विचरण करना अर्थात् अपने संयम, निग्रह, शुद्धाचरण द्वारा उसकी ओर मन, वचन, कर्म द्वारा अग्रसर होना । आज हम जीवन की इस उच्च भूमिका में तो नहीं उठ पाते । इसलिए “**ब्रह्मचर्य**” शब्द का अर्थ है— ‘वीर्य रक्षा’ जननेन्द्रिय का संयम, आत्मिक बल की वृद्धि । वीर्य की रक्षा करते हुए वेदाध्ययन पूर्वक ईश्वर-चिंतन करने का नाम ब्रह्मचर्य है । दूसरे शब्दों में जिसका वीर्य ऊर्ध्वरिता है—वह ब्रह्मचारी है क्योंकि सब इन्द्रियों से अधिक चंचल जननेन्द्रिय का संयम सबसे अधिक कठिन है । ब्रह्मचर्य वह तप है, जिसके द्वारा ब्रह्म तक पहुँचा जा सकता है । यह एक प्रकार का व्रत है जिसके द्वारा मनुष्य को अपने वीर्य की रक्षा कर उच्च ईश्वरीय जीवन की साधना और तदनुसार बुद्धि का विकास करना पड़ता है । शुद्ध आचरण द्वारा वीर्य की मन, वचन, कर्म द्वारा रक्षा करते हुए शास्त्रों में वर्णित सात्विक जीवन व्यतीत करना ब्रह्मचर्य है ।

भगवान शंकर कहते हैं “**ब्रह्मचर्य**” अर्थात् वीर्य धारण करना, उसकी रक्षा करना ही उत्कृष्ट तप है । इससे बढ़कर तपश्चर्या तीनों लोकों में दूसरी कोई हो नहीं सकती । अखण्ड वीर्य को धारण करने वाला पुरुष इस लोक में प्रत्यक्ष देवता ही है । ‘ब्रह्मचर्य से बुद्धि प्रखर होती है, इन्द्रियाँ अंतर्मुखी हो जाती हैं, स्मरण शक्ति तीव्र होती है, मनन शक्ति बढ़ जाती है,

चित्त में एकाग्रता आती है, आत्मिक बल बढ़ता है, आत्मनिर्भरता, साहस, निर्भीकता आदि देव दुर्लभ गुण स्वतः प्रसूत हो जाते हैं।' विद्यार्थी जीवन में ब्रह्मचर्य पालन से शरीर, मन और आत्मा दृढ़ होती है। ऋषियों के अनुसार सांसारिक और पारमार्थिक उन्नति का मूल ब्रह्मचर्य ही है। ब्रह्मचर्य-पालन से सुख, आरोग्य और तेज बढ़ता है, बल और वीर्य में वृद्धि होती है, स्वास्थ्य और दीर्घायु मिलती है, हमारा सुख, तेज, विद्या, बल, सामर्थ्य सब ब्रह्मचर्य पर ही आधारित है।

शास्त्र कहता है जिस प्रकार समुद्र को पार करने का नौका उत्तम उपाय है, उसी प्रकार इस संसार से पार होने का उत्कृष्ट साधन ब्रह्मचर्य है। जो ब्रह्मचारी ब्रह्मचर्य रूपी तपस्या करते हैं और उत्तम विद्या एवं ज्ञान से अपने मन को पवित्र बना लेते हैं वह संसार के समस्त दुःखों, कठिनाइयों को पार कर जाते हैं। महान् परिश्रम पूर्वक वीर्य का साधन करने वाले ब्रह्मचारी के लिए इस पृथ्वी पर भला किस कार्य में सफलता नहीं मिलती ? ब्रह्मचर्य के प्रताप से मनुष्य मेरे (ईश्वर के) तुल्य हो जाता है। 'ब्रह्मचर्य परंतपः।' अर्थात् ब्रह्मचर्य ही सबसे श्रेष्ठ तपश्चर्या है। एक ओर चारों वेदों का फल और दूसरी ओर ब्रह्मचर्य का फल दोनों में ब्रह्मचर्य का फल विशेष है।

स्वामी सत्यदेव जी ने लिखा है 'वीर्य इस शब्द में जादू भरा है। इसके उच्चारण करने से श्रेष्ठ और सात्विक भावों का संचार होने लगता है। ईश्वर वीर्यवान् है।' रामचन्द्र जी बड़े यशस्वी वीर्यवान राजा थे। भीष्म ने आयु भर वीर्य का संचय कर ब्रह्मचर्य धारण किया। इसी के प्रताप से भीष्म में इच्छा मृत्यु की शक्ति थी। वीर्य रक्षा ही संजीवनी है। शिवजी और शुक्राचार्य के ज्वलंत उदाहरण हमें उपलब्ध हैं। श्री हनुमान जैसे ब्रह्मचारी का बल, स्फूर्ति और पुरुषार्थ आज भी विस्मय का प्रश्न बना है। संसार में वीर्यवती जाति ही अपना साम्राज्य स्थापित कर सकती है।

संसार में जो कुछ भी निरोग, सुन्दर, स्वरूपवान, कान्तिमय, मनोहर है, जो कुछ वीरता, ओज, पराक्रम, पौरुष, तेज, विशेषणों से प्रकट होता है तथा धैर्य, निर्भीकता, बुद्धिमत्ता, सौम्यता, मनुष्यत्व आदि गुणों से जो

विचार उत्पन्न होते हैं वे सब वीर्य शब्द के अन्तर्गत हैं। जैसे सूर्य संसार को प्रकाश देता है वैसे ही वीर्य मनुष्य, पशु-पक्षी और वृक्षों में अपना प्रभाव दिखाता है। जिस प्रकार सूर्य रश्मियों से रंग-बिरंगे फूल विकसित होकर प्रकृति का सौन्दर्य बढ़ाते हैं, इसी प्रकार वह वीर्य भी अपने भिन्न-भिन्न स्वरूपों में अपनी प्रभा की छटा दिखाता है।

संसार वीर्यवान के लिए है। वीर्यवती जातियों ने संसार में राज्य किया और वीर्यहीन होने पर उनका नामो-निशान मिट गया। जिन मुसलमान वीरों ने अपनी चमकती हुई तलवार से योरोप, एशिया में बड़े-बड़े साम्राज्य स्थापित किये थे, वे व्यभिचार आदि दोषों में फँसकर अपना सर्वस्व खो बैठे, जिन महाराष्ट्र शूरवीरों ने मुसलमानी-राज्य को छिन्न-भिन्न कर भारत में हिन्दू राज्य स्थापित किया था, वे ही विषय भोग, परस्पर की फूट तथा कलह के कारण अपनी सब आशाओं पर पानी फेर बैठे। योरोप की बड़ी-बड़ी जातियों का इतिहास भी इसी वीर्य की महिमा को बतलाता है। यूरोप की जिस स्पेन जाति ने नई दुनियाँ में अपनी विजय पताका उड़ाई थी, वही स्पेन समृद्धिशाली होने पर विषय भोग का शिकार बन गया और अपने उपनिवेशों को वीर्य हीनता के कारण खो बैठा।

नित्य प्रति के जीवन में ब्रह्मचर्य अर्थात् वीर्य धारण का प्रभाव प्रत्यक्ष देखा जाता है। वीर्यहीन डरपोक, कायर, दीन-हीन, रोगी और दुर्बल होता है। जिस व्यक्ति के शरीर में वीर्य नहीं है वह जीवित नहीं रह सकता क्योंकि वीर्य की एक बूँद नष्ट करना मृत्यु तथा एक बूँद धारण करना जीवन है। वीर्यवान पुरुषार्थी होता है। साहस और हिम्मत से बोल सकता है, कठिनाई का मुकाबला कर सकता है, वह उत्साही सजीव, शक्तिशाली और दृढ़ निश्चयी होता है। उसे रोग नहीं सताते, वासनाएँ चंचल नहीं बनातीं, दुर्बलताएँ विवश नहीं करतीं। वह प्रभावशाली व्यक्तित्व प्राप्त करता है और दया, क्षमा, शान्ति, परोपकार, भक्ति, प्रेम, वीरता, स्वतन्त्रता, सत्य द्वारा पुण्यात्मा बनता है। धन्य है ऐसा ब्रह्मचारी।

वीर्य का प्रचण्ड प्रताप—

मनुष्य के रक्त में जो जीवाणु हैं, उनका प्रमुख कारण वीर्य नामक तत्त्व है। रक्त में जो लाली है, जो चमक और आभा है, त्वचा में जो दमक है, उसका प्रधान कारण वीर्य तत्त्व ही है। वैद्यक शास्त्र में वीर्य को मनुष्य शरीर का सार तत्त्व माना जाता है। हमारे भोजन से रक्त और रक्त से एक नियमित मात्रा में वीर्य की उत्पत्ति होती है। आयुर्वेद का मत है— भोजन के पचने पर रस, रस से रक्त, रक्त से माँस, माँस से मेद, मेद से अस्थि, अस्थि से मज्जा और मज्जा से वीर्य उत्पन्न होता है। रस से लेकर मज्जा तक प्रत्येक धातु पाँच दिन-रात और डेढ़ घड़ी तक अपनी अवस्था में रहती है तत्पश्चात् तीस दिन-रात और नौ घड़ी में रस से वीर्य बनता है।

साधारणतः चालीस सेर खुराक से एक सेर रक्त बनता है, और एक सेर खून से दो तोला वीर्य बनता है। एक मनुष्य माह में एक मन से अधिक भोजन नहीं खा सकता। इस प्रकार दो तोला वीर्य एक मास की कमाई है जो मूर्ख और नासमझ लोग एक ही बार में नष्ट कर डालते हैं।

कुछ व्यक्तियों के अनुसार 40 ग्रास आहार से एक बूँद रक्त और 40 बूँद रक्त से 1 बूँद वीर्य तैयार होता है। रासायनिक रूप से वीर्य में खट तथा फास्फोरस की मात्रा अधिक होती है और ये दोनों जीवन-तत्त्व शारीरिक पोषण के लिए अत्यंत आवश्यक हैं। प्रारंभिक 15 वर्ष तक प्रकृति अपने नियंत्रण से वीर्य एकत्रित करती है। किशोरावस्था तक पहुँचते-पहुँचते वीर्य पकने लगता है और पुरुष में बाह्य तथा आन्तरिक परिवर्तन प्रारंभ हो जाते हैं। अण्डकोषों से बहिःस्राव भी प्रारंभ हो जाता है। अण्डकोषों के अन्तःस्राव से पुरुष में पुरुषत्व प्रकट होता है। ब्रह्मचर्य का अभिप्राय, शरीर क्रियाविज्ञान की दृष्टि से इन जनन ग्रन्थियों को स्वस्थ रखना है। जनन ग्रन्थियों में जीवन बढ़ता रहता है। इसके संयम से आयु और स्वास्थ्य दोनों को लाभ होता है। यदि इन ग्रन्थियों का अन्तःस्राव होता रहे और शरीर में खपता रहे तो शरीर के अंगों का विकास होता है।

वीर्य को नष्ट करने वाला नरकगामी होता है, जीवनभर रोगी, अभाग्यशाली और दुःखी रहता है। वीर्य अत्यंत अनमोल वस्तु है। इसी के संचय से मनुष्य देवता बनता है। वीर्य के अभाव से मनुष्य की प्रत्येक प्रकार की उन्नति रुक जाती है। वीर्य चारों पुरुषार्थों का मूल है, मुक्ति देने वाला है। प्रकृति चाहती है कि वीर्य के द्वारा मनुष्य को दृढ़, मजबूत और पुरुषार्थी बनावे। मेधाशक्ति की अभिवृद्धि करे, दीर्घ जीवन, उत्साह, स्वास्थ्य प्रदान करे, आत्मा को बलवान बनावे। 25 वर्ष की आयु तक वीर्य कच्चा रहता है किन्तु इसके अनन्तर ज्यों-ज्यों वीर्य पकने लगता है, मनुष्य अपने आपको जीवन शक्ति से पूर्ण समझता है। जो व्यक्ति मन, वचन, काया से दृढ़तापूर्वक ब्रह्मचर्य पालन करता है, उसी का वीर्य परिपक्व होता है। अंग-अंग सौंदर्य से परिपूरित हो उठते हैं, मुख तथा कपोलों पर एक अभिनव आत्मा दृष्टिगोचर होने लगती है, वीर्य की परिपक्वता से पूर्व, उसका अपव्यय करने से युवक आजीवन अकर्मण्य, पौरुषहीन और हीनत्व की भावना ग्रंथि से पूर्ण रहता है।

वीर्य एक ऐसी पूँजी है जिसे बरबाद कर आप बाजार में खरीद नहीं सकते, जिसके अपव्यय से आप ऐसे गरीब बनते हैं कि प्रकृति तक आपके ऊपर दया नहीं करती, आरोग्य लुट जाता है, आयु क्षीण हो जाती है, आपको एक निश्चित परिमाण में ही वीर्य की पूँजी मिलती है। यह भी आपके अपने संयम, पाचन, भोजन, व्यायाम का परिणाम होता है, इसके लिए आपको स्वयं मेहनत करनी होती है। कोई आपको यह पूँजी उधार नहीं दे सकता, दया करके कोई यह अमूल्य पदार्थ आपको दान नहीं दे सकता। इसकी भिक्षा नहीं माँगी जा सकती। अतः सावधान! अपनी इस संचित पूँजी को सम्हाल कर खूब सावधानी से व्यय कीजिए, वीर्य नाश कर मृत्यु की परेशानी की ओर, रोग-शोक की ओर न जाइये। वीर्य-रक्षा द्वारा धन, मान, पद, प्रतिष्ठा, बुद्धि, वैभव, दीर्घायु, सम्पन्नता का आनन्द प्राप्त कीजिए। शारीरिक, मानसिक, सामाजिक, आध्यात्मिक जिम्मेदारियाँ उठाने के लिए ब्रह्मचारी बनिये।

वीर्यहीन युवकों के लक्षण—

वीर्य-हीन व्यक्ति संसार में जीवित नहीं रह सकता। ज्यों-ज्यों वीर्य शक्ति क्षीण होती है, मानो मृत्यु का संदेश सुनाती है। वीर्यनाश द्वारा मृत्यु होती है, उसकी चेतावनी प्रकृति कई रूपों में देती है। यदि रोगी इस पर भी नहीं सँभल पाते तो रोग-शोक, आधि-व्याधि, शारीरिक दुर्बलताएँ सामने आ खड़ी होती हैं। अतः यदि निम्न लक्षणों में से कुछ भी आप में हों तो बड़े सावधान रहें—

वीर्य नाश करने वाले बालक में हीनत्व की दुर्बल भावना ग्रंथि बना लेती है, एक अव्यक्त भय उसके अन्तर्मन में छिपा रहता है। वह अपने से बड़ों में आँख से आँख मिलाकर बातें नहीं कर सकता। औरतों की भाँति उसकी आँखें जमीन पर लगी रहती हैं, वह छिपता फिरता है और अपराधी की भाँति जनसमुदाय से बचता है। यदि वह हिम्मत कर बड़ों से बातें करना भी चाहता है तो ढीठ और असंस्कृत बनता है। वह जितना ही अपने आपको निर्दोष साबित करने का प्रयत्न करता है, उतना ही धूर्त प्रतीत होता है। उसका किसी कार्य में जी नहीं लगता, सुस्त रहता है, स्वभाव चिड़चिड़ा, क्रोधी और रुक्ष बन जाता है। उसके मन में गन्दे, अश्लील, कामी विचार हुड़दंग मचाते रहते हैं, मानसिक दुर्बलता बढ़ जाती है, स्मृति कमजोर हो जाती है। शृंगार प्रधान उपन्यास, सिनेमा, गन्दे गीत, विषय-वासना सम्बन्धी पुस्तकों की ओर रुचि बढ़ जाती है, कुसंगति में रुचि होती है। वासना का ताण्डव प्रारंभ होता है और युवक किसी अव्यक्त वेदना से पीड़ित इधर-उधर मारा-मारा फिरता है। उसका मुख जो प्रसन्न रहना चाहिए था, दुःखी और उदास बन जाता है। स्वभाव का माधुर्य कटु और रूखा हो जाता है। मुखमण्डल निस्तेज बन जाता है। वीर्य के कारण रक्त में जो चमक और लाली होती है, वह कम हो जाती है और त्वचा फीकी, पीली और खुरदुरी, कभी-कभी काली बन जाती है।

शरीर में कमजोरी, नेत्र व कपोल अन्दर धँस जाना, मूछें पीली व लाल हो जाना, बाल सफेद हो जाना, कोई रोग न होने पर भी शरीर का जर्जर, ढीला सा रहना, गालों पर मुँहासे के दाग, झाँई, काले चकत्ते पड़ना, जोड़ों में दर्द, तलवे तथा हथेली पसीजना, अपच और कब्जियत, रात्रि में स्वप्नदोष होना, पेशाब करते समय वीर्य निकल जाना, रीढ़ की हड्डी का अत्यधिक झुक जाना, एकाएक आँखों के सामने अँधेरा सा छा जाना, मूर्छा छा जाना, नाक के कोने में कालिमा छा जाना, वृषण की वृद्धि तथा उनका बेहद लटक जाना, आवाज का मोटा, रूखा और अप्रिय बन जाना, सर में, कमर तथा छाती में पुनः-पुनः दर्द उत्पन्न होना, दाँत के मसूड़े फूलना, मुँह से दुर्गन्धि आना—ये वे शारीरिक विकार हैं जो अप्राकृतिक ढंगों से वीर्यपात करने वाले युवकों में अक्सर पाये जाते हैं।

इसके अतिरिक्त मूत्र मार्ग में पीड़ा प्रारंभ हो जाती है, मूत्र थोड़ा-थोड़ा करके बार-बार आता है, गरमी-प्रमेह, सुजाक इत्यादि निंद्य रोग घेर लेते हैं, स्वप्नदोष तो रोज रात को हो जाता है, मुँह पर मुँहासे खूब निकलने लगते हैं, दिमाग में गर्मी छा जाती है, किसी भी उद्देश्य में सफलता नहीं होती, आयु क्षीण हो जाती है और आत्मग्लानि तथा पश्चाताप के कारण कभी-कभी वीर्य का नाश करने वाला काल का ग्रास बन जाता है।

वीर्य एक अनमोल जीवन तत्त्व है। जीवन में दो चार दस बार को छोड़ कदापि किसी भी अवस्था में वीर्य नाश नहीं होना चाहिए। इस वीर्य संग्रह के बल पर मनुष्य देवता बन सकता है। बिना ब्रह्मचर्य के सामान्य मनुष्यों की तो क्या, इन्द्र महाराज की भी दुर्गति हो सकती है। वीर्य मुक्ति प्रदाता, जीवन शक्ति, दीर्घायु, सम्पूर्ण सिद्धियाँ, स्वास्थ्य, श्रेष्ठता, स्वतन्त्रता देने वाला अनमोल जीवन तत्त्व है। वीर्य को नष्ट करने वाला युवक अकाल से बच नहीं सकता।

किशोरावस्था से यौवन में प्रवेश—

चौदह वर्ष के पश्चात् प्रत्येक बालक एक नवीन जीवन में प्रवेश करता है। उसमें धीरे-धीरे मानसिक और शारीरिक परिवर्तन प्रारंभ हो जाते हैं। उसमें पुरुषत्व के लक्षण उत्पन्न होने लगते हैं, प्रजनन ग्रंथियों में वीर्य तेजी से बढ़ने लगता है, लड़कों के ऊपर के होंठ, ठोढ़ी तथा जननेन्द्रिय प्रदेश में बाल उग आते हैं। वीर्य तेजी से बनना प्रारम्भ हो जाता है। शुक्र-कण बढ़ने लगते हैं। बहुत कम व्यक्ति शुक्रकण तथा वीर्य में अन्तर समझते हैं। शुक्रकण अण्डकोषों से उत्पन्न होते हैं, वीर्य कई स्रावों का नाम है। इसमें शुक्रकण शुक्राशय का स्राव अष्ठीला तथा ऊपर की ग्रन्थियों के स्राव मूत्रकण भी सम्मिलित हैं। इसमें फास्फोरस अधिक मात्रा में होती है। शुक्रकण जीवन-तत्त्व से पूर्ण छोटे-छोटे कीटाणु हैं जिनमें रज-कणों से संयुक्त होकर नवजीवन उत्पन्न करने की शक्ति होती है। इनकी रक्षा से शरीर पुष्ट होता है। सादा और तपस्यामय जीवन व्यतीत करने वाले बालक में किशोरावस्था देर से आती है, भोग-विलासमय जीवन वाले बालक की दाढ़ी मूँछें शीघ्र उग आती हैं, आयु क्षीण होने लगती है। मानव जीवन के पूर्ण विकास के लिए इन तत्त्वों का संरक्षण ठीक तरह होना चाहिए।

किशोरावस्था से यौवन में प्रवेश का समय बड़ा नाजुक होता है। यदि युवक सम्हल जाय तो ठीक, अन्यथा बिगड़ने और कुमार्ग पर जाने के लिये इतने प्रलोभन फैले हुए हैं कि अच्छे कुल के युवक भी बुरे मार्ग पर जा सकते हैं। माता-पिता तथा गुरुजनों का कार्य तथा उत्तरदायित्व महान् है। उन्हें युवक की मनोभावनाओं, कामवासनाओं के उद्दाम प्रादुर्भाव, विपरीत लिंग वाले व्यक्ति की ओर आकर्षण को समझना चाहिए। युवक को एक साथी के रूप में मार्ग प्रदर्शन करना चाहिए। यह तीखी नजर रखनी चाहिए कि किशोर हस्तमैथुन, गुदामैथुन, लिंगेन्द्रिय की निर्बलता, स्वप्नदोष, प्रमेह, व्यभिचार आदि का शिकार न बन जाय। आजकल समाज में ऐसी शैतान मंडली दुष्ट प्रकृति के लोगों की कमी नहीं है जो किशोर को कुमार्ग पर ले

जाने में नहीं हिचकते। छात्रावासों तक में ऐसे दुष्ट व्यक्तियों का वास रहता है जो किशोरों को कुमार्ग पर लगा देते हैं। उनकी कच्ची आयु में ही वासना प्रदीप्त हो उठती है, अप्राकृतिक ढंग से वीर्यपात होना प्रारंभ होता है, वे अनर्गल औषधियों का सेवन करते हैं, उससे मूत्र रोग बढ़ते हैं, स्वप्नदोष पुनः-पुनः होता है, वीर्य पतला पड़ जाने के कारण बूँद-बूँद कर मूत्र मार्ग से नष्ट होने लगता है, शरीर की हड्डियों में पीड़ा होती है, कँपकँपी आने लगती है। यहाँ तक कि भरी युवावस्था ही में शरीर जर्जर होकर मृत्यु हो जाती है।

प्रकृति का यह नियम है कि जितनी देर से यौवन आता है और उसका उपभोग प्रारम्भ होता है, उससे चौगुने समय तक आयु रहती है। यदि पचास वर्ष तक एक बिन्दु भी वीर्य नष्ट न किया जाय, या इससे अधिक अवस्था तक इस धन का किफायतसारी से उपभोग किया जाय तो मनुष्य सौ डेढ़ सौ वर्ष तक मजे में जी सकता है। यौवन तो वीर्य पर निर्भर है। वीर्य की रक्षा कीजिये, यौवन की रक्षा हो जायेगी। वासना पच्चीस वर्ष की आयु में जाग्रत होगी, यदि अस्वाभाविक जीवन न बिताया जाय। शरीर जब पूर्ण परिपक्व हो जाय तभी विवाह करना ठीक है।

डॉ. एलबर्ड ने लिखा है, “घोड़े पर चढ़ना, सीने की मशीन को पैरों से चलाना, अधिक इन्द्रिय-स्पर्श, साईकल चलाना, अधिक रेलगाड़ी की सवारी से उत्तेजना होती है और यह उत्तेजना आगे चलकर किशोर को हस्तमैथुन को ओर प्रवृत्त कर देती है।” बड़े-बड़े घरों में दुष्ट नौकर बच्चों की भावना को जाग्रत कर उन्हें कुमार्ग पर लगाते हैं। कुसंग, गन्दी पुस्तकें, सिनेमा, नग्न तस्वीरें, कुत्सित कल्पनाएँ, अस्वाभाविक पतन के अन्य कारण हैं। सिनेमा ने किशोर, युवकों तथा विद्यार्थियों का जितना नैतिक पतन किया है, इतना शायद अन्य कोई भी न कर सकता था। सिनेमा तो शैतान का जादू, कुमार्ग का आकर्षक कुँआ, कुत्सित कल्पनाओं का भण्डार है। यह फैशनबिल शराब आज के युवकों को खोखला बना रही है। इसी के कारण छोटे किशोर अनेक गन्दी बातें सीख लेते हैं। ऐसे प्रेम मिलन के दृश्य दिखाए जाते हैं, ऐसे-ऐसे गन्दे गाने गाये जाते हैं, जिन्हें सुनने से मुँह लज्जा

से नीचे झुक जाता है। आज हमारे सिनेमाघर व्यभिचार, धूर्तता, मायाचार और कामोत्तेजक वातावरण से भरे हैं। गन्दे फिल्मों की भरमार है और दुःख तो यह है कि लोग सिनेमा जाना बुरा नहीं समझते। सिनेमा अभिनेत्रियों के चित्र इतने बिकते हैं, गन्दे, उत्तेजक उपन्यास आज इतने मिलते हैं कि उनसे पापमयी वृत्तियाँ यकायक उत्तेजित हो जाती हैं। प्रारंभ में पाप झिझक के साथ किया जाता है किन्तु धीरे-धीरे झिझक जाती रहती है और दुष्ट मन पाप को छिपाने का भी प्रयत्न नहीं करता।

अनेक बार किशोर अपने गुप्त अंगों की सफाई यथोचित रीति से नहीं करते। वे उधर इतना कम ध्यान देते हैं कि गुप्त अंगों में मैल जम जाती है फिर खुजली प्रारम्भ हो जाती है, तत्पश्चात् छोटी-छोटी फुन्सियाँ हो जाती हैं और हाथ अपने आप गुप्त अंगों का स्पर्श करता है। अनजान में ही बालक को उत्तेजना का साधन मिल जाता है।

बालक-बालिकाओं का सहशिक्षा हानिकर है। स्कूल और कालेजों में सहशिक्षा से हानि अधिक हुई है। छिपे-छिपे विद्यार्थी घृणित से घृणित पाप करने के लिए तैयार हो जाता है। कच्ची आयु में लड़के-लड़कियों की संकल्प-शक्ति इतनी दृढ़ नहीं होती कि वे अपनी अप्राकृतिक कामोत्तेजना को संकल्प से दृढ़तापूर्वक शमन कर दें, इस उत्तेजना को शांत करने के लिए अस्वाभाविक उपायों का अवलम्बन करने लगते हैं।

हमारा आजकल का भोजन इतना अप्राकृतिक हो गया है कि उससे कामवासना कुमारी अवस्था में ही जागृत हो जाती है। **मनुष्य जैसा भोजन करता है, वैसा ही बन जाता है।** राजसी भोजन से शृंगार रस उत्पन्न होता है। कामवासना उद्दीप्त हो जाती है। राजसी भोजन कौन-कौन से हैं। अत्यंत उष्ण, कड़ुवा, तीखा, नमकीन, मिठाइयाँ, तेल से तले पदार्थ, गरिष्ठ वस्तुएँ जैसे पकौड़ी, कचौड़ी, मालपुआ, मिष्ठान्न, खट्टा, चरपरा, लाल मिर्च से भरा भोजन, प्याज, लहसुन, माँस, अण्डा, शराब, चाय, काफी, सोडा, लेमन, पान, तम्बाकू, गाँजा, भाँग इत्यादि राजसी भोजन हैं। इनके प्रयोग से नवयुवक का भी मन चंचल हो जाता है। मिर्च, मसाले, खटाई

कामोत्तेजक पदार्थ हैं। आज की दुनिया में इन भोजनों का बोलबाला है। आज फैशनेबल जगत में बीड़ी, सिगरेट का जितना प्रचार है, शायद उतना कभी नहीं हुआ। छोटे-छोटे बच्चे बीड़ी फूँकते दिखाई देते हैं, पान खाते हैं, सिनेमा के भेदे गाने गाते फिरते हैं, कुचेष्टाएँ करते फिरते हैं, अनुचित प्रेम सम्बन्ध स्थापित करने की चेष्टाएँ करते हैं। यह सब कुछ अज्ञान में होता है। छोटे बालक पाप आचरण से अनजाने में ही भावी सुख, स्वास्थ्य, आयु की जड़ें खोखली कर डालते हैं। वीर्य नाश का फल उन्हें उस समय तो विदित नहीं होता, कुछ आयु बढ़ने पर मोह का पर्दा दूर होता है, वे अपने अज्ञान के लिए पश्चाताप करते हैं। प्रारंभ का कुसंग, छिपे पाप आचरण, जननेन्द्रिय का असंयम उन्हें गड्ढे में गिराता है। वे जीवन पर्यन्त नहीं सम्हल पाते। रीढ़ में हमेशा दर्द बना रहता है, गठिया सताने लगता है, स्नायु सम्बन्धी रोग फैलते हैं। मिरगी तथा अन्य मानसिक रोग हो जाने से मानसिक प्रगति बिल्कुल रुक जाती है। ऐसे बूढ़े नवयुवक आज गली-गली में चूरन, चटनी, माजून, वीर्यवर्द्धक गोलिएँ ढूँढ़ते फिरते हैं। अब भी समाज में कहीं-कहीं बाल विवाह प्रचलित है। इसके कारण बालक-बालिकाओं का बड़ा अनैतिक पतन हो रहा है।

प्रत्येक माता-पिता का कर्तव्य है कि किशोरावस्था समाप्त होने से पूर्व किशोर को इस परिवर्तन के रहस्य को धीरे-धीरे समझा दे। यह न समझे कि बालक स्वयं ही इन बातों को समझ लेगा। उसे सन्मार्ग पर चलाने का कार्य पवित्र और उत्तरदायित्व पूर्ण है। शिक्षक भी यथासम्भव निष्प्रयोजन बातों, गन्दे लड़कों, अश्लील पुस्तकों से अपने विद्यार्थियों की रक्षा करें, स्त्रियों में अधिक न बैठने दें, नशीली चीजों से बचावें, सिनेमा के भूत से दूर ही रहने की शिक्षा दें। वीर्यनाश से होने वाले भयंकर रोगों को बताने में जरा भी संकोच न करें। इसमें शरमाना, लजाना या वीतराग रहना मानो भावी नागरिकों का सर्वनाश करना है। यौवन से पूर्व ही प्रस्तुत पुस्तक में वर्णित ब्रह्मचर्य रक्षा के अनमोल नियमों से उन्हें भली भाँति परिचित करा देना चाहिए।

वीर्य रक्षा और पुनरुत्थान के अनूठे नियम —

(1) सात्विक संकल्प—क्या गृहस्थ, क्या कुमार यदि वह अत्यधिक वीर्यपात का शिकार होकर रोगग्रस्त हो चुका है तो वह सद्संकल्प से पुनः आत्म सुधार के मार्ग का पथिक बन जाता है। “विश्वासः फलदायकम्” आत्मोन्नति में विश्वास तथा दृढ़ संकल्प पुनरुत्थान के प्रधान तत्त्व हैं। आप आन्तरिक मन से संकल्प कीजिए कि विषयभोग, वीर्यनाश, कामोद्रेक, वासना की पूर्ति; ये स्वास्थ्य, सदाचार, प्रकृति के विरुद्ध हैं। स्त्री प्रसंग करना कफ़न की तैयारी करना है। व्यभिचार, हस्तमैथुन, गुदा मैथुन, कुसंग, क्षण-क्षण निर्बल, निस्तेज, दुःखी तथा अल्पायु बनाने वाले हैं। वीर्य के एक बिन्दु का नष्ट करना मानो अपनी जीवनी शक्ति को गन्दे नाले में फेंकना है। सभी अप्राकृतिक वीर्य नाश के मार्ग शरीर की कोमल नसों को निर्बल करने वाले शरीर की चमक-दमक, कान्ति का नाश करने वाले हैं। अतः प्रत्येक तर्क से आप आन्तरिक मन को समझाइए कि वह कामोपभोग में प्रवृत्त न हो, न वैसी बातें करे, न सोचे। पवित्र संकल्प कीजिए कि आप पुण्यात्मा, सदाचारी, वीर्यवान् बनेंगे, जीवन की सर्वांगीण उन्नति करेंगे, बुद्धि तथा मन को शिव संकल्प, शुद्ध विचार, कल्याणकारी कामों में लगायेंगे और मन, वचन, कर्म द्वारा अद्भुत दैवी शक्ति प्रकट करेंगे।

शुभ संकल्प उन पुष्ट विचारों का नाम है जिनमें कूट-कूटकर विश्वास भरा हो। यदि आप हृदय से चाहते हैं कि निम्न जीवन की भूमिका से उठकर उच्च आध्यात्मिक जीवन पर चलें, तो उसके लिए दृढ़ संकल्प कर लीजिए। अपने संकल्प तथा विचारों से हम नेष्ट या श्रेष्ठ बनते हैं। यदि गुप्त रूप से मन में आन्तरिक गुप्त मन में कोई दबी हुई वासना या कुकल्पना छिपी रहे, तो वह भी साधक का पतन करने के चारों ओर उसी प्रकार वातावरण निर्माण करते हैं। मन में सद्संकल्प को सजाना, आन्तरिक मन में दृढ़ता से जमाना वीर्य रक्षा का प्रथम सोपान है।

पुण्य संकल्पों में पाप संकल्पों से कहीं अधिक शक्ति है। पाप स्वयं निर्बल है, वह असत्य है, खोखला और निर्जीव है। उसमें स्थायित्व नहीं, ठहराव नहीं। अतः पुण्य-संकल्प स्वभावतः ही बुरे विचार, कुकल्पना दुश्चिन्ताओं को परास्त करेंगे। पापमय भावना पुण्य संकल्प के समक्ष ठहर नहीं सकती। भगवान ने स्वयं कहा है- 'तुम्हारी यह चेष्टा कभी निष्फल न होगी। तुम्हारा अवश्य उद्धार होगा।' आपके पुण्य संकल्प निश्चय ही पापमय वासना को दग्ध कर देंगे। कुबुद्धि, अज्ञान और कुविचारों को परास्त करेंगे। दुःस्वप्नों का नाश करेंगे। आपके हृदय में एक अंतःज्योति है, ईश्वर का एक मंदिर है, अन्तरात्मा की एक आवाज है, उसे विकसित कीजिए। उस दैवी ज्योति को जाग्रत कीजिये। यह विवेक जागृति ही उन्नति का राजमार्ग है। इस अन्तर्ज्योति के जाग्रत होने से कामवासना, रतिप्रसंग, विषयभोग से स्वयं वैराग्य हो जायेगा। यह अन्तर्ज्योति चैतन्य शक्ति है, अन्तर्बल है। आज से ही दृढ़तापूर्वक संकल्प कीजिए- "मैं कभी निंद्य वासना से सने हुए अपवित्र विचारों, गंदी कल्पनाओं की तरंगों को हृदय में ग्रहण नहीं करता। मैं प्रत्येक स्त्री को माता या भगिनी के रूप में देखता हूँ। इन्द्रियाँ मेरे वश में हैं, मैं पूर्ण ब्रह्मचारी हूँ। वीर्य की रक्षा करता हूँ। शुभ सोचता हूँ, शुभ कर्म करता हूँ। कामवासना मनुष्य का पतन करने वाली है। वह विध्वंसक है। अतः मैंने उसे जड़-मूल से उखाड़ फेंकने का निश्चय किया है। मैं इस शुद्ध विचार द्वारा ही वीर्यरक्षा कर सकता हूँ। बिन्दु को साधने वाला सप्त सिंधुओं को अपनी मुट्टी में कर सकता है। संपूर्ण संसार में ऐसी कोई स्थिति नहीं जिसे ब्रह्मचारी अपने वश में न कर सकता हो। वीर्य रक्षा के इस संकल्प में निश्चय ही मेरी विजय होगी।"

यह तत्त्व गाँठ बाँध लीजिये कि मनुष्य गन्दे और निंद्य विचारों से पापात्मा और शुद्ध विवेक पूर्ण दृष्टि से पुण्यात्मा बनता है। अतः आप हृदय मंदिर में पवित्रता, प्रेम, प्रसन्नता, उत्साह, निर्भयता, सभ्यता और शान्तिदायक सद्बिचारों का आवाहन कीजिए। कामुक भावना स्वयं दग्ध हो जायेगी।

(2) काम का दहन— जिन्हें वीर्य रक्षा करनी है, उन्हें काम-वासना से घोर संघर्ष करना होगा। काम का उदय न होने दीजिए क्योंकि एक बार उत्तेजना होने से यह वासना इतनी शक्तिशाली हो जाती है कि मनुष्य का सर्वनाश कर सकती है। लोक-लाज, प्रतिष्ठा, स्वास्थ्य, वीर्य सबका पतन हो जाता है।

अनेक बार देखा जाता है कि प्रत्यक्ष मैथुन से इतनी हानि नहीं होती जितनी मानसिक मैथुन से होती है। मानसिक व्यभिचार के कारण सूखी खाज, पकने वाली खुजली, दाद, फुन्सियाँ, मुँहासे, झाँई, बगलगन्ध, दुर्गन्ध युक्त पसीना तथा अन्य गुप्त रोग फैलते हैं। मानसिक व्यभिचार से दूर रहने के लिए साधक को अत्यंत सतर्कता पूर्वक इन आठ प्रकार के मैथुनों से दूर रहना चाहिए।

(1) स्मरण-नारी का पढ़ा हुआ वर्णन, देखे हुए चित्र की स्मृति, सुने हुए या सिनेमा में देखी हुई नर्तकियों, अभिनेत्रियों का ध्यान चिन्तन या स्मरण। सुन्दर स्त्रियों के स्मरण से अनावश्यक उत्तेजना फैलती है, कामुकता के भाव उदय होते हैं। शरीर की गर्मी बढ़ जाती है और वीर्य (जीवन शक्ति) का नाश हो जाता है।

(2) कीर्तन-स्त्रियों के रूप, गुण और अंगों की चर्चा या वर्णन करना, गन्दे गीत, सिनेमा के भद्दे गीत, श्रृंगारिक, कविता पाठ, कजली होली के गीत, भद्दी बातें बकना, अपशब्दों का उच्चारण हमेशा के लिए त्याग दीजिये।

(3) केलि-स्त्रियों के साथ खेलना, अधिक रहना, अनावश्यक कार्य निकालकर उनके पास रहना, उनके सम्पर्क में रहकर गेंद, ताश, शतरंज, फाग खेलना, मनोविनोद करना, स्त्रियों की संगति में आनन्द लेना कामोत्तेजना बढ़ाने वाले हैं। इससे अनजाने में गुप्त मन कामुक हो जाता है और स्वप्नदोष प्रारंभ होता है।

(4) प्रेक्षण-किसी स्त्री की ओर पाप पूर्ण अथवा चोर दृष्टि से देखना। यह इस बात को स्पष्ट करता है कि मन में कामवासना का प्रचण्ड ताण्डव

मचा है। मन वासना की पूर्ति चाहता है। नीचतापूर्ण संकेत, औरतों को छिप-छिप कर देखना, मोहित हो जाना, कामुक मन का प्रत्यक्ष लक्षण है। गुप्त मन की वासना अनेक मानसिक रोगों, भावना ग्रंथियों, पागलपन, अनिद्रा, बेढंगे व्यवहारों में प्रकट होती है।

(5) **गुप्त भाषण**—स्त्रियों के पास बैठकर गुप्त भाषण करना, औरतों में पुनः आना-जाना और उनके साथ एकान्त में बैठने की इच्छा, बातचीत, औरतों के सौंदर्य की चर्चा, सान्निध्य की भावना, ब्रह्मचर्य नाश में पूर्ण समर्थ हैं।

(6) **संकल्प**—शृंगार रस पूर्ण वाहियात गन्दे उपन्यास, कहानियाँ पढ़ना, वेश्याओं, अभिनेत्रियों के चित्र पास रखना, गन्दी कविताओं का उच्चारण अथवा नाटक, सिनेमा में भद्दे कामोत्तेजक दृश्य देखकर उन्हीं को प्राप्त करने का संकल्प या इरादा करना, पतन का खुला द्वार है।

(7) **अध्यवसाय**—किसी अप्राप्य या देखी-सुनी स्त्री की प्राप्ति के लिए पापपूर्ण कोशिश, लोकलाज की परवाह न कर काम तृप्ति के प्रयत्न। वेश्यागमन या गन्दी औरतों को पाने की इच्छा।

(8) **प्रत्यक्ष सम्भोग**—अनुचित तरीकों से व्यभिचार। व्यभिचार, चीरी, भय, लज्जा, झिझक के साथ किया जाता है, उसे छिपाने का प्रयत्न किया जाता है, उपयुक्त अवसर ढूँढ़ने के प्रपंच मन में उठा करते हैं।

ये पाप वृत्तियाँ धीरे-धीरे मन में गहरी उतर जाती हैं और अप्रत्यक्ष मन में अड्डा जमा लेती हैं। वहीं से ये पाप वासनाएँ अस्थिरता, खींचतान, आकर्षण-विकर्षण का दौर चलाती हैं। जीवन धूर्तता, मायाचार और छल से भर जाता है। व्यभिचारी व्यक्तियों में चिड़चिड़ापन, झुँझलाहट, आवेश, अतृप्ति छा जाती है। अमृत संयोग मस्तिष्क सम्बन्धी विकार और मानसिक दुर्गुण उत्पन्न करता है। मानसिक उद्वेग में शरीर दिन-दिन धुलता जाता है। असंयम के कारण अधिक वीर्यपात होता है। इस प्राण तत्व के अपव्यय के कारण अनेकों नवयुवक पाप के शिकार होते हैं। व्यभिचार से मनुष्य जाति की सामूहिक हानि है। अतएव यह प्रत्येक दृष्टि से त्याज्य है, अधर्म है।

ब्रह्मचारी को मानसिक व्यभिचार से सदैव दूर रहने का प्रयत्न करना चाहिए। ऊपर जिन आठ प्रकार के मैथुनों का उल्लेख किया गया है, ठीक उनके विपरीत कार्य करने चाहिए। अपने कर्म में बड़े सावधान रहिये। सावधान यदि इनमें से कोई भी बात आप छिपे-छिपे करते रहे तो नष्ट-भ्रष्ट हो जायेंगे। स्वास्थ्य, आयु और जीवन शक्ति सभी का नाश होगा। काम का उद्भव ही होने न दीजिये। कामान्ध पुरुष को स्त्री का सहवास सम्पर्क बड़ा भला मालूम होता है, बेचारा मोहवश होकर स्त्री संग करता है और फिर वीर्य नाश कर रोगी बनता है। विषयों से कभी मन तृप्त न होगा, स्वप्नदोष और बढ़ेगा और अकाल से ही जीवन दीप बुझ जायेगा।

सच्चा कल्याण इसी में है कि—

यच्च कामसुख लोके यच्च दिव्यं महत्सुखम् ।

तृष्णाक्षय सुखस्यैते नार्हतः षोडशी कलाम् ॥

अर्थात्—निष्कामता में, विषयों के वैराग्य में जो सुख भरा हुआ है, उसका सोलहवाँ हिस्सा भी सुख संसार के भोगों में व स्वर्ग सहित समस्त विषयों में तथा दिव्य ऐश्वर्यादि में नहीं है। अतः इस महा पापात्मा काम रिपु को शत्रु मानकर तुरन्त मार डालो नहीं तो यह दृष्ट तुम्हें भक्षण कर जायेगा। सावधान !

(3) कामश मन के उपाय— यदि काम रूपी शत्रु आपको विचलित करे तो तुरन्त ही उसे मार डालिये। कामोत्तेजना प्रारंभ न होने दीजिए। मन में यदि वासना का तनिक भी संचार हो तो यह समझकर न रह जाइये कि कोई हर्ज नहीं, हम कोई गन्दा काम थोड़ा ही करते हैं। सोचने, विचारने, कल्पना करने में क्या हानि है ? नहीं, आपको मन से काम वासना के सब भाव, कल्पना, इच्छा एकदम निकालनी होगी, मन को विषयों की ओर से मोड़ना हो, उसे सात्विक विषयों में एकाग्र करना होगा तभी आप रिपु से बच सकेंगे। यदि प्रयत्न करने पर भी गुप्तेन्द्रियों में उत्तेजना हो तो काम शमन के लिए आप निम्न कार्य कीजिए।

* आप तुरंत अपने वातावरण को परिवर्तित कर दीजिए। घर से बाहर निकल आइये, बाजार घूम लीजिए, सरिता, उद्यान, जंगल, पुस्तकालय, मंदिर इत्यादि में चले जाइये। इष्टमित्र के या किसी महापुरुष के गृह पर चले जाइये।

* कुछ थोड़ा सा व्यायाम कर लीजिये। दौड़िए या कोई खेल खेलने निकल जाइये।

* कुछ सात्विक ग्रंथ, कोई मासिक पत्र, भजन, उपदेश, पढ़िये। मन को वैराग्य, सदाचार, भक्तिपूर्ण उपदेशों में लगाइये।

* कामोत्तेजना से शरीर में गर्मी बढ़ जाती है, श्वास गर्म आने लगती है, त्वचा का तापमान बढ़ जाता है, रक्त का वेग बढ़ जाता है। इस गर्मी के दाह से कुछ धातुएँ पिघल कर मूत्र के साथ स्रवित होने लगती हैं। अतः थोड़ा सा ठण्डा जल पी लीजिये। स्नान कीजिए या गुप्तेन्द्रिय को धो डालिये।

* यदि आप कोई उत्तेजक उपन्यास, कहानी या नाटक पढ़ रहे हैं तो उसे त्याग दीजिए। उसके स्थान पर कोई सदाचार का ग्रंथ पढ़िये।

* अकेले मत रहिये। माता-पिता, भाई इत्यादि के पास चले जाइये और कुछ काम करने लीजिए। **खाली मन शैतान का गृह है। उससे काम लीजिये।**

* मन में वैराग्य की भावनाएँ लाइये। किसी मृत स्नेही का स्मरण कीजिये। किसी लाश का मानसिक चित्र बनाइये। वैराग्य की भावनाएँ काम शमन कर सकेंगी।

(4) पवित्र मातृभाव की दृष्टि—वीर्य रक्षा के लिए आप स्त्रियों की ओर से अपना दृष्टिकोण बदल दीजिये। कामोद्रेक तब होता है, जब आप उन्हें पत्नी रूप में देखते हैं। आप उन्हें केवल माँ या बहिन के रूप में देखा कीजिए। “माँ” शब्द कितना पवित्र है। माँ के सन्मुख आते ही हमारी पाप वासनाएँ दग्ध हो जाती हैं। प्रत्येक स्त्री में ईश्वर की प्रतिमा देखिये। जब कभी किसी स्त्री के प्रति वासना पैदा हो, तुरन्त अपनी माँ या ईश्वर की प्रतिमा उसमें देखिये। आपका मन लज्जा से भर जायेगा और

तुरन्त उस विनाशकारी विचार को त्याग देंगे। अपनी करनी पर तुम्हें बेहद शर्म आवेगी।

यदि आप गृहस्थ हैं तो स्मरण रखिए कि केवल एक ही स्त्री आपकी पत्नी हो सकेगी। अनेक ओर व्यर्थ मन का लुभाने से व्यर्थ ही उद्वेग ही उद्वेग बढ़ेगा, मन में अस्थिरता, चंचलता खींचातानी बढ़ेगी। अतः मन में उद्वेग की सृष्टि क्यों करते हैं? इस प्रलोभन से बचिए। प्रत्येक नारी को पवित्र मातृ दृष्टि से देखिये। जब आप किसी पाप के विचार तथा अशुभ कल्पना में प्रवृत्त होते हैं तो अतृप्त संयोग, मस्तिष्क संबंधी विकार और मानसिक दुर्गुण उत्पन्न करता है। इच्छित तृप्ति न होने पर मन अन्य कार्यों के लिए बेकाम हो जाता है, कुचेष्टाओं में उलझा रहता है। अनिद्रा एवं दुःस्वप्न आते हैं। मानसिक व्यभिचार सर्वथा निन्दनीय है। यह एक प्रकार का क्षय रोग है जो युवक को निर्बल, कान्तिहीन और खोखला बना देता है, रक्त की गति मन्द और वीर्य को पतला कर देता है। परिणाम स्वरूप पागलपन, उन्माद, मिरगी, नपुंसकता न्यूनाधिक रूप में प्रकट हो जाती है। एक विशेषज्ञ के अनुसार मानसिक व्यभिचार रक्तचाप की बीमारी उत्पन्न कर देता है।

वासना भी मन से ही उत्पन्न होती है। यदि हम मन में पवित्रता रखें, दृष्टि में प्रत्येक नारी के लिए मातृभाव रखें तो मन, वचन, कर्म, सभी अवस्थाओं में ब्रह्मचर्य पालन कर सकेंगे। अतः मन में कामुकता के किसी भाव, विचार या कल्पना को कदापि स्थान न दीजिये।

(5) मानसिक व्यभिचार से बचिए—मानसिक संयम ब्रह्मचर्य का मूल है। यदि हमारा मन कामवासना के इशारों पर नृत्य करता रहेगा, कभी इस कभी उस स्त्री पर दौड़ता रहेगा तो मानसिक उत्पात कदापि न रुकेगा। रह-रहकर बुद्धि लुप्त हो जाया करेंगी और वीर्य रक्षा न हो सकेगी। ब्रह्मचर्य अथवा वीर्य-रक्षा का यह अर्थ कदापि नहीं है कि मन से तो चौबीसों घण्टे व्यभिचार में लिप्त रहें, कल्पनाओं के गन्दे स्थानों पर दौड़ते रहें और बाहर से ब्रह्मचारी बनने का अभिनय करें। मानसिक व्यभिचार का

कुफल संक्रामक बीमारियों के रूप में मिलेगा। दूषित कल्पना कामोत्तेजना के कारण आपके सम्मुख स्वनिर्मित प्रतिमाएँ सामने ला खड़ी करेंगी जो स्वप्नदोष प्रारंभ कर देंगी। कुत्सित कल्पनाओं, कुविकल्पों, गन्दी-गन्दी अश्लील तस्वीरों, गन्दी पुस्तकों, स्टेशन के बुक-स्टॉलों पर बिकने वाली कामोत्तेजक प्रेम कहानियों, उपन्यासों को सदा के लिए छोड़ दीजिए। यदि आपकी कल्पना शक्ति किसी गन्दी दलदल में फँसी है तो शुभ संकल्पों से उन्हें पवित्र कीजिए। मानसिक व्यभिचार और दुराचार का वायुमण्डल जो सिनेमा की गन्दी फिल्मों, नाटकों, अर्द्धनग्न नर्तकियों के नाच, नाचघरों द्वारा सभ्य जगत में बन गया है, तोड़ दीजिए। यदि आप गुप्त रूप से कामुकता की तृप्ति में लगे हैं तो उसे तुरन्त छोड़ दीजिए। बाजीकरण औषधियाँ, बाजारू दवा-दारू, चटनी, भस्म का प्रयोग त्याग दीजिए।

हमारी आत्मा स्वयं गन्दी बातों, पापमय जीवन से बचना चाहती है। काम वासना की अप्राकृतिक तृप्ति तथा स्वप्नदोष के पश्चात हृदय में स्वाभाविक रूप से लज्जा, आत्मग्लानि, संशय, चिंता, क्लेश की भावनाएँ जागृत हो जाती हैं। प्रारंभ में यह आत्म-ग्लानि अत्यंत तीव्र होती है। आत्मा बुरा-बुरा कहती है, पाशविक वृत्तियाँ “केवल एक बार और वासना की बात सोच लूँ, केवल एक बार”—यह सोचते-सोचते अधःपतन प्रारंभ हो जाता है। पुनः पुनः काम वासना में लिस रहने से अन्तरात्मा की आवाज भी उसके विरुद्ध नहीं उठ पाती। फिर मन का बाँध टूट सा जाता है, गन्दी बात सोचते बुरा नहीं लगता, व्यभिचार, मैथुन आदि भी साधारण सी बात प्रतीत होने लगती है, सम्पूर्ण जीवन वासनामय बन जाता है, मन कुचेष्टाओं में सदैव फँसा रहने लगता है। काम-कल्पना की आदत एक पिशाचिनी है जो मनुष्यों की संतानों को मार्ग-भ्रष्ट कर देती है। अतः काम वासना का उद्भव ही न होने दीजिये। मन में वासना को स्थान ही न दीजिए। यदि उत्पन्न हो जाए तो तुरन्त उसका गला दाब दीजिए। यह न सोचिए कि जरा इस दूषित कल्पना का और मजा ले लें, बाद में इसे दबा देंगे। एक बार इस पिशाचिनी के चंगुल में फँसे कि फँसे। इसे यहीं मार डालिये।

धिक्कार है उस पापमय जिन्दगी पर जो मक्खियों की तरह पापों की विष्ठा के ऊपर भिनभिनाने में और कुत्ते की तरह विषय भोगों की जूना-चाटने में व्यतीत होती है। उस व्यक्ति को धिक्कार है जो पर स्त्री कल्पना में निरत रहता है या गुप्त रूप से व्यभिचार में प्रवृत्त रहता है। खेद है उस पापमय जीवन पर, जो कामवासनामय उद्वेग तथा मानसिक आवेश में उलझा रहता है। वह जिन्दगी घृणास्पद है, जो कपट, धूर्तता, मायाचार, छल, अनुचित यौन सम्बन्धों से युक्त है। जिनका जीवन इस वासनामय स्वार्थों को पूर्ण करने की उधेड़बुन में निकल गया-हाय! वे कितने अभागे हैं। सुर दुर्लभ मानव देह रूपी बहुमूल्य रत्न, इन दुर्बुद्धियों ने काँच के टुकड़ों के बदले बेच दिया है, किस मुख से वे कहेंगे कि हमने यौवन का सद्व्यय किया। इन कुर्बुद्धियों को अन्त में पश्चाताप ही प्राप्त होगा। एक दिन उन्हें अपनी भयंकर भूल प्रतीत होगी, पर उस समय अवसर उनके हाथ से निकल गया होगा और सिर धुनने के अतिरिक्त उन्हें कुछ भी प्राप्त न होगा।

साधको! आत्मा को जगाओ, वासना को दूर भगाओ, उसकी केंचुली तोड़ डालो। ब्रह्मचर्य ही जीने योग्य जिन्दगी है, यही वह जीवन है जिसे आदर्श और अनुकरणीय कहा जा सके। आपका जीवन प्रेम से, सत्य से भरा-पूरा होना चाहिए।

मानसी पूजा की आदत डालिये—आप ऐसा सोचिये कि परमेश्वर आपके सामने हैं। आप उनकी उपस्थिति में निरंतर रहते हैं। वे आपके कार्य ही नहीं, आपके मनोभावों, विचारों तथा गुप्त से गुप्त मन्तव्यों को भी देखते हैं। आप उनसे कुछ छिपा नहीं सकते। अतः जो कुछ भी बुरे भाव अन्तःकरण में लायेंगे, वे अपने पास रखकर आप पतित और कुपथगामी बनेंगे। आप मन में किसी घृणित विचार को स्थान ही न दीजिये, कि आराध्य देव के समक्ष नीचा देखना पड़े। अपना जीवन एक खुली पुस्तक रखिए जिससे प्रत्येक व्यक्ति उसे देख सके, उसमें कोई ऐसी गन्दी बात ही न छोड़िये कि किसी के सामने आपको लज्जित होना पड़े। बाहर-भीतर एक सा रहिए।

पूजा और उपासना की अनेक विधियाँ हैं। आप अपने अन्तःकरण में परमात्मा कि किसी भी रूप को—गणेश, शिव, दुर्गा, महावीर को रख लीजिये। उस मूर्ति का प्रतिबिम्ब आप अपने अन्तःकरण में देखा कीजिये। मानसी पूजा में किसी वाहन उपकरण—पुष्प, दीप, चन्दन, अक्षत की आवश्यकता नहीं होती। बाहरी मूर्ति की पूजा तो आन्तरिक मानस पूजा का प्रारंभ है। ब्रह्मचारी को किसी बाह्य पूजा की इतनी आवश्यकता नहीं पड़ती जितनी मानस पूजा की। मानस पूजा के लिए किन पुष्पों की आवश्यकता है? आपकी शुभ भावनाएँ, शिव संकल्प, भद्र कल्पनाएँ। इस पूजा के लिए कौन से धूप, दीप, चन्दन चाहिए? आपके सुन्दर कृत्य, प्राणिमात्र की सच्ची सेवा, त्याग, क्षमा और उदारता। जैसे यज्ञ में समिधा डालकर जलाते हैं, उसी प्रकार मन की कल्मष इसमें भस्म कर दीजिये।

अपने आराध्यदेव में आप जिन गुणों का अस्तित्व समझते हैं, उनके मानसिक चित्र मानस पटल पर निर्माण कीजिए। फिर उस मानसी पूजा में इतने तल्लीन हो जाइये कि आप उसी में तदाकार हो जाँय। जैसी भी स्थिति में रहें, अपने व्यक्तित्व को अपने इष्ट-उद्देश्य में पिरोते रहिये। यह तदाकारिता ही सच्ची उपासना है। धीरे-धीरे आपके गुप्त मन से ऐसी प्रेरणा होने लगेगी कि वासना, कुभाव और कुकृत्य की ओर आपकी प्रवृत्ति ही न होगी। आपकी पूजा सफल हो जायेगी और इच्छित फल हो जायेगा।

(6) यह विलासप्रियता छोड़िये—शृंगार से काम उत्पन्न होता है, कुत्सित इन्द्रियों को अनावश्यक उत्तेजना हो जाती है। आजकल का जीवन विलास प्रियता और फैशन से बुरी तरह भर गया है जिसमें तन, मन, धन तीनों स्वाहा हो रहे हैं। हर तरह के ऐश आराम का चस्का मनुष्यों को लग गया है। वे आलसी और सुकुमार बन गए हैं। बनावटी, अस्वाभाविक रूप से दूसरों को भ्रम डालने के लिये आज मायाचार का बोलबाला है। यह दंभ अनीति अहंकार, असत्य, ठगी, दुर्भाव और प्रपंच समाज में फैल रहा है। यह दंभ भड़कीली पोशाक के रूप में हम अपने चारों ओर फैला हुआ

देखते हैं। ऐसे व्यक्ति जो बिल्कुल साधारण से हैं, अंग्रेजी पोशाक पहनकर आंशिक रूप से अपने बड़प्पन की धाक लोगों पर जमाना चाहते हैं। केवल वस्त्रों तक ही यह फैशन सीमित नहीं, मनोरंजन, खान-पान, सजावट, वेश विन्यास में यह बैठ गया है। युवक अपने को अधिक से अधिक रूपवान सिद्ध करने के लिए खूब शृंगार करते हैं। पान, बीड़ी, सिगरेट, शराब, इत्र फुलेल, क्रीम, पाउडर का प्रयोग करते हैं। उनकी हर चीज पर विलासिता की छाप रहती है। सिनेमा ने तो समाज में अन्धेर ही ढा दिया है। हर एक उभरता हुआ युवक अपने आपको अभिनेता जैसा बना-ठना सुन्दर चाहता है। किसी सुन्दरी (कल्पित ही सही) के प्रेम-पाश में आबद्ध होना चाहता है। प्रेम भी उपहास की वस्तु बन गया है। इस शृंगार पूर्ण वातावरण में आत्मसंयम बहुत कठिन है।

ब्रह्मचर्य के लिए सादी रहन सहन, अथवा सभ्य-जगत के भोगविलास से विरक्ति अत्यन्त आवश्यक है। विशेष सजधज, कामोत्तेजक वस्त्र, वेशभूषा, सुगन्धित तेल, इत्र, हार मालाएँ, शृंगार छोड़ देना चाहिए। विलास की अनावश्यक वस्तुएँ आसपास से हटा देनी चाहिए अन्यथा बार-बार उनके उपयोग के लिए मन दौड़ता है। शृंगारपूर्ण वस्तुओं से न तो सहायता ही मिलती है, न आत्मसंयम ही। यह मन को बहुत पथ-भ्रष्ट करती हैं। भ्रम में डालने के लिए बनाव शृंगार या झूठे आकर्षण के मायाचार को छोड़ दीजिये। तड़क-भड़क भरी खर्चीली पोशाक के स्थान पर साधारण सादी रहन-सहन अपनाइये। फैशन और विलासिता के रंगीलेपन से बचिए। भड़कीले फैशन के दंभ के मूल में अमीरी का या रूपवान होने का अहंकार छिपा रहता है। यह अहंकार आध्यात्मिक दृष्टि से सर्वथा हानिकारक है। यदि उसका पोषण होता है तो वह अधिक मजबूत एवं परिपुष्ट बन जाता है। तब वह अनेक बुराइयों की सृष्टि करता है। विलासप्रियता से दंभ बढ़ता है। मेहनत न करने को जी चाहता है, अनेक प्रकार की सामाजिक बुराइयाँ बढ़ती हैं। फैशन-परस्ती बाहर से देखने में साधारण सी बात प्रतीत होती है किंतु काम-रिपु को प्रोत्साहन देकर यह सर्वग्रासी घातक वस्तु बन जाती है।

अतः भाइयो! इस व्यर्थ के अभिनय को छोड़िये, रूप हीनता का गन्दा उपहासास्पद विज्ञान न कीजिये। आध्यात्मिक दृष्टि से यह अनावश्यक एवं हानिकारक है। आप सादगी पसन्द कीजिए। अपने विचारों की भाँति वेशभूषा को भी सात्विक रखिए।

दृढ़ता पूर्वक आप संकल्प कीजिये कि खान-पान, वस्त्र, आभूषण, विलास, सजावट, मायाचार में अपना बहुमूल्य समय व्यतीत न करेंगे, सदा सरल और उच्च जीवन व्यतीत करेंगे, विलासप्रियता, शृंगार या उत्तेजक वातावरण में न रहेंगे, अधिक सुख भोग की सामग्री एकत्रित न करेंगे, भोगविलास की बातों से सदैव दूर रहेंगे। दृढ़ता से शान्त चित्त हो निम्न संकेत अपने सुप्त मन को दीजिये—

“मैं अब रात-दिन शरीर के पोषण एवं शृंगार में ही अपना समय नष्ट नहीं करता, मुझे प्रतीत हो गया है कि वासनाओं को बढ़ाने और तृप्त करने से परम सुख की प्राप्ति नहीं होती। अब मैं तुच्छातितुच्छ इच्छाओं का गुलाम नहीं रहूँगा। छुद्र वासनाएँ अब मुझे नीचे नहीं दबा सकती। क्षण भंगुर प्रलोभनों, भड़कीली, अस्वाभाविक, रंग-बिरंगी, खर्चीला, विलासमय, फैशन-परस्ती के पीछे-पीछे अब मैं नहीं छटपटाता, सांसारिक दम्भ, मायाचार, फैशन, वेश-विन्यास, शृंगारमय वस्तुएँ मुझे तंग नहीं कर सकता। धूर्त लोगों की बनावटी आकर्षण, विलास की मोहक वस्तुएँ मुझे ब्रह्मचर्य से विचलित नहीं कर सकती। प्रबल से प्रबल दुष्ट आसुरी वासना का मुझ पर न आक्रमण हो सकता है और न वे मुझे दबा सकती हैं।”

उपरोक्त संकेत में रमण करो, पुनः-पुनः प्रतिदिन प्रातःकाल अथवा सायंकाल एकान्त स्थान में शान्त चित्त होकर दृढ़ता से सरल सादे जीवन की उपरोक्त भावना पर मन लगाओ। तुम्हें स्वयं बनावटी विलासप्रियता से घृणा हो जायेगी।

(7) सत्संग कीजिये— हम जैसे मित्रों, व्यक्तियों के वातावरण में निवास करते हैं, वैसे ही बनते हैं। हमारे मित्रों के विचारों का प्रभाव अप्रत्यक्ष रूप से

हमारे मनोजगत पर पड़ता है और हमारे अंतःकरण का निर्माण करता है। जैसे एक अतिसूक्ष्म बीज उचित वातावरण पाकर फल, फूल, पत्तियों से युक्त एक विशालकाय वृक्ष बन जाता है, ठीक इसी प्रकार सत्संगति या कुसंगति से सामाजिक क्रिया-प्रतिक्रिया आघात से उचित तथा अनुचित वासनाओं का मानसिक प्रभाव हमारे व्यक्तित्व का निर्माण करता है। मनुष्य के मन में जितनी भावनाएँ उठती हैं, उनमें से अधिकांश सज्जन या दुर्जन व्यक्तियों के संकेतों द्वारा प्रेरित होती हैं। दूसरों के ये संस्कार अनेक प्रकार सम्मिश्रित होकर हमारे मन में भावनाओं के रूप में उठा करते हैं। बाह्य चेतना के कारण उससे सम्बन्धित भाव मन में परिपुष्ट होते और क्रियाओं के रूप में प्रकट होते हैं।

सत्य संग से गुप्त मन में सत्य, प्रेम, न्याय, शान्ति, वैराग्य, आध्यात्मिकता इत्यादि सद्भावनाओं का उदय होता है, हम पवित्रता की ओर बढ़ते हैं, सद्भावों और सद्गुणों का विकास होता है। ब्रह्मचर्य के लिये साधक को दुर्जनों का साथ तुरंत त्याग देना चाहिए। कुसंग से नर्क की प्राप्ति होती है, मन में वासनाओं का ताण्डव प्रारम्भ होता है और मनुष्य पापी, नीच और दुरात्मा बन जाता है। आधुनिक सभ्यता में माता-पिता, अध्यापकों को अपने बच्चों या विद्यार्थियों के संग का विशेष ध्यान रखना चाहिए। गन्दे और आवारा लड़कों के साथ रहकर बच्चे बिगड़ते हैं, नौकर पुष्प जैसे बालकों को पथ भ्रष्ट करते हैं, कुसंग का भूत आज हमारे युवकों को डस रहा है।

श्री मच्छंकराचार्य का वचन है— “सत्संग से निःसंग की प्राप्ति होती है। निःसंग से निर्मोहत्व अर्थात् विषयों में वैराग्य बढ़ता है, निर्मोह से सत्य का पूर्ण ज्ञान व निश्चय होता है और सत्त्व से, निश्चल ज्ञान से, मनुष्य जीवन मुक्त होता है अर्थात् इस संसार से तर जाता है।”

सत्संग का दायरा बहुत विस्तृत है। इसमें निम्न बातों का समावेश है।

(1) ऐसे दुर्जनों का साथ छोड़ दीजिए जो पापी, कामी, नीच और दुरात्मा हैं जो आपको गन्दी बातें सिखलाते हैं या गन्दे स्थानों में खींचते हैं।

कामी पुरुष के साथ रहने से अवश्य कामवासना जाग्रत होगी। नीच पुरुष अपनी ही तरह अपने मित्रों को भी नीच, पापी, दुरात्मा बनाता है।

(2) ऐसी पुस्तकों का साथ छोड़ दीजिये जिनमें कामोत्तेजक दृश्यों, चरित्रों, घटनाओं के वातावरण का वर्णन है। प्रेम कहानियाँ, गन्दे उपन्यास, भद्दे गीत, सस्ते नाटक, सिनेमा के गानों की पुस्तकों का साथ त्याग दीजिये। पुस्तकें यदि उत्तम हों तो मनुष्य की उन्नति कर सकती हैं। यदि वे ही पुस्तकें गन्दी हों तो पतन का मार्ग और भी ढालू कर देती हैं। आज ऐसों की ही भरमार है। सावधान! ऐसी किसी पुस्तक का विष काले सर्प की भाँति महान् दुर्गतिकर है।

(3) ऐसे वातावरण, स्थान या वस्तुओं का संग त्याग दीजिये जिनसे उत्तेजना होती है, सिनेमा में न जाइये, नाटक न देखिये, व्यभिचार के अड्डों की तरफ कभी भूल कर भी न निकलिये। कुस्थानों में धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष सब नष्ट हो जाते हैं परन्तु सत्संग से चारों पुरुषार्थ अनायास ही सध जाते हैं।

(4) ऐसे विचारों को मन से निकाल डालिये जिनसे मनःलोक नीरस, गन्दा, शुष्क, धुँधला और वासना के अंधकार से पूर्ण हो जाता है। काम, क्रोध, लोभ, मोह, मद, मत्सर, अहंकार, छल, पाखण्ड, असंयम, दुराचार आदि के कुविचार एक प्रकार के मानसिक शत्रु हैं। अतः वे मनःलोक में निशाचरों की भाँति छिपे बैठे रहते हैं और अवसर पाते ही दलबल सहित निकल पड़ते हैं।

हम किसका संग करें ? इस प्रश्न के उत्तर में हम कहेंगे कि आप सज्जनों को ढूँढ़िए। विद्वान्, महात्मा, योगी, शुभ-चिन्तकों के साथ रहिये, उनके उपदेश सुनिये, उन पर काया, वाचा, मनसा से आचरण कीजिए। जिह्वा से कभी गन्दी बात न कहिये, कान से गन्दी कामोत्तेजक बात (कजली, होली, गालियाँ, भद्दे गीत) न सुनिये, नेत्र से कामोत्तेजक चीजें (नाटक, वेश्याओं का नाच, सिनेमा, थियेटर, अभिनेत्रियों के चित्र, नग्न स्त्रियों के चित्र, गुप्त अंग) न देखिये। मन में कुविचारों, कुकल्पनाओं, कामोत्तेजक

दृश्यों का स्मरण न कीजिए। जब नीच विषय-विकार चित्त को विचलित करें तो सत्पुरुषों के पास जाइये। आपकी संपूर्ण नीच वृत्तियाँ दब जायेंगी। परमात्मा का शुभ चिन्तन सब विकारों को दग्ध करने वाला अमोघ अस्त्र है। अतः अन्तर्दृष्टि से उसी का मानसिक चित्र बाहर-भीतर चहुँ ओर देखते रहो। जो मनुष्य विषय का दृढ़ चिन्तन करता है, वह तद्रूप हो जाता है। तुम ब्रह्म का चिन्तन (जप, धारणा, ध्यान) करोगे तो उसी के अलौकिक गुण-धर्म तुममें विकसित हो जावेंगे और तुम सच्चे अर्थों में ब्रह्मचारी बन जाओगे।

यदि आपको ज्ञानी महात्मा नहीं मिलते तो सद्ग्रन्थों का संग कीजिए। यदि आप ज्ञान, भक्ति, वैराग्य, आध्यात्म के अच्छे जीवन चरित्र पढ़ें तो सम्पूर्ण पाप वृत्तियाँ दब जाएँ। सद्ग्रन्थ इस लोक की चिन्तामणि हैं। ग्रंथ हमारे अन्तर्जगत् का निर्माण करते हैं। हमारे अव्यक्त मन में यदि शुभ संकल्प, शुभ भावनाएँ रहें तो उन्हीं के अनुसार हमारे कर्म बन कर पुस्तकों से आन्तरिक अन्धकार दूर होता है और अब्दुत दैवी शक्ति जाग्रत होती है। अच्छी पुस्तकों को अपना मित्र बनाइये। सुख में, दुःख में, विषम परिस्थितियों में सद्ग्रन्थ आपको मार्ग दर्शन करेंगे। आन्तरिक शान्ति देंगे, आचरण की सभ्यता सिखायेंगे। जिन्हें अपने वीर्य की रक्षा करनी है, उन्हें निम्न पुस्तकों का अध्ययन करना चाहिए—

- 1—श्रीमद् भगवद्गीता
- 2—योग वाशिष्ठ
- 3—दासबोध
- 4—रामायण, ज्ञान वैराग्य प्रकाश
- 5—तत्त्व चिन्तामणि-जयदयालकृत
- 6—सत्यामृत-सत्यभक्त कृत
- 7—भक्तों के जीवन-चरित्र
- 8—तुलसी, सूर, नानक, कबीर, मीरा के काव्य-ग्रन्थ

आत्म संस्कार के विधान का स्वाध्याय एक प्रमुख अंग है। आत्म संस्कार सम्बन्धी मासिक पत्र (कल्याण, अखण्ड ज्योति, कल्पवृक्ष, गीता धर्म, मानव धर्म, गुरुदेव) आज वृहत् संख्या में ऐसे लेख दे रहे हैं, जिनसे ज्ञान, वैराग्य, भक्ति बढ़ती है। जीवन चरित्र पढ़ने से हमें महान् व्यक्तियों की उन्नति के रहस्य प्रतीत होते हैं। पढ़ना वही चाहिए जिससे कुछ शिक्षा मिले, शुभ कर्म में प्रवृत्ति हो, कुछ संयम आवे। अध्ययन सूर, तुलसी, मीरा, नानक, कबीर जैसे कवियों का करना चाहिए जो सद्वृत्तियों को जाग्रत करते हैं।

सावधान ! कोई बुरी कुवासनाओं को उत्तेजना देने वाली पुस्तक न पढ़ बैठना। उसका नशा न उतरेगा, वह तुम्हारा सर्वनाश कर देगा। आजकल प्रेम को बदनाम करने वाली कुरुचिपूर्ण पुस्तकों का बड़े आकर्षक ढंग से विज्ञापन किया जाता है। पुस्तक खरीदते समय आप यह जाँच कर लीजिए कि कौन पुस्तकें पवित्र और सारगर्भित हैं और कौन पुस्तकें अपवित्र और निःसार हैं। उत्तेजक कहानियाँ, प्रचलित संशयवाद, उद्वेगपूर्ण उपन्यास, श्रृंगारपूर्ण काव्य से हमेशा के लिए दूर ही रहिए। जितने भी हो सके धर्म ग्रंथ, नीतिग्रंथ, चरित्र ग्रंथ, चरित्र को उन्नत करने वाले सद्विज्ञान ग्रंथ माला ('अखण्ड-ज्योति' कार्यालय से प्रकाशित) के अनमोल ग्रंथ पढ़िये। ये ऐसी पुस्तकें हैं जो आपको यह बतलावेंगी कि कैसे जीना चाहिए, क्या करना चाहिए? आपकी धारणा में उत्तम ज्ञान भर देगी, कल्पना में उत्तम चित्र अंकित कर देंगी। श्रेष्ठ मनोभावों को उभार देंगी और हृदय को पवित्र और मृदुल भावनाओं से परिपूरित कर देंगी।

पुस्तकों में वैसी ही क्रियमाण जीवन-शक्ति उत्पन्न करने का गुण होता है जैसी उनके लिखने वाले की आत्मा में था। पुस्तकों में उनके लेखकों की पवित्र बुद्धि का सार खींचकर रक्खा रहता है जिसके सेवन से ब्रह्मचारी में ज्ञान का संचार होता है।

सत्संगी की परीक्षा कैसे हो ? हम कैसे जानें कि आपने सत्संग महाव्रत प्रारंभ कर दिया है ? श्री पथिकजी ने सत्संग की कसौटी यह बताई

है, “ सत्संग प्रेमी सज्जन व्यवहार शुद्धि के लिए निरंतर विवेकपूर्वक सावधान रहते हैं। सतोगुणी प्रकृति दृढ़ रखने के लिए दूषित संग और तमोगुणी व रजोगुणी आहार नहीं करते। अशुद्ध विचारों से निरंतर सजग रहकर विरोध एवं परित्याग करते हुए शुद्ध सात्विक विचारों को ही अपने मन या मस्तिष्क में स्थान देते हैं।”

सत्संगी सदा शान्त, प्रसन्नचित्त, उत्साही, गम्भीर, दुःखों के बीच में सहनशील और निर्भय रहता है। सत्संगी को मोह नहीं होता, प्रेम होता है। मोही वह है जो अपना सुख चाहता है, प्रेमी वह है जो दूसरे का सुख चाहता है, जो प्रेमास्पद को ही सुख देने के लिए सब कुछ करता है।

सत्संगी में गरीबों व दुखियों की सेवा के लिए, तन, मन, धन से तत्परता रहती है। रात-दिन जाड़ा, गर्मी, वर्षा आदि द्वन्द्वों में भी सेवा के अवसरों में वह आलस या प्रमाद नहीं करता। **सत्संगी** किसी की निन्दा नहीं करता और निन्दा करने वालों से बहुत बचता है, किंतु अपनी निन्दा करता है एवं निन्दकों से विरोध या द्वेष नहीं करता क्योंकि अपनी निन्दा से **सत्संगी** की उन्नति होती है। अनेक सदुणों का अभ्यास दृढ़ होता है। विनम्रता, सहनशीलता और निराभिमान आदि सद्भाव पुष्ट होते हैं। सत्संगी अपनी सेवा नहीं कराता वरन् करता है। कभी-कभी वह दूसरों की प्रसन्नता के लिए, भाव विकास के लिए ही दूसरों को भी अपने प्रति सेवा का अवसर देता है।

सत्संगी में कामवासना का पूर्ण संयम रहता है। न गंदी बातें सोचता है, न दुष्कर्म करता है। वासना से उसे वैराग्य होता है। उसकी आत्मा ऐसी उच्च भूमिका में निवास करती है कि कामोद्वेग उसे होता ही नहीं। बाह्य एवं आन्तरिक दृष्टि से वह स्वच्छ रहता है।

खान-पान का संयम— ब्रह्मचर्य रक्षा के लिए मन, वचन तथा शरीर तीनों की स्वच्छता की परम आवश्यकता है। मन का कल्मष दूर करने के लिए उपयोगी नियम दिये जा चुके हैं। अब हम शारीरिक स्वच्छता पर विचार करेंगे।

जैसा हमारा आहार होगा, वैसे ही विचार उत्पन्न होंगे। यदि हम कामोत्तेजक तामसी आहार करें तो हम कामोत्तेजक विचारों के शिकार बनेंगे, पाप कर्मों में हमारी प्रवृत्ति होगी और काम, क्रोध, मद, अहंकार रोगादि हमें पतन की ओर खींचेंगे। यदि हम सदा सात्विक अल्पाहार करेंगे तो पवित्र, ब्रह्मचारी बनेंगे। भोजन की महत्ता हमें ब्रह्मचर्य रक्षा में न भूलनी चाहिए। अनेक व्यक्ति यह नहीं जानते कि रात्रि का उत्तेजक भोजन किस प्रकार चित्त को उद्विग्न करता है और स्वप्नदोष का कारण बनता है। ढूँस-ढूँस कर हलुआ, पूड़ी, मिर्च-मसाले वाले भोजन मनुष्य को मलीन, आलसी, विषयी, निस्तेज और अल्पायु बनाते हैं। **सादा व अल्पाहार करने वाला व्यक्ति निरोगी, निर्विकारी, उत्साही और तेजस्वी बन सकता है।**

अधिक भोजन करने वाला ब्रह्मचर्य धारण नहीं कर सकता। कामदेव पेटू मनुष्य को बुरी तरह पछाड़ता है, महीनों की संचित वीर्य सम्पत्ति कुछ क्षणों में नष्ट हो जाती है, मन और तन दोनों रोगी बन जाते हैं, स्वप्नदोष प्रायः रोज ही होने लगता है। केवल चटपटा स्वाद होने की वजह से ही बहुत सा भोजन कर लेने में हर प्रकार की हानि है, भोजन भी अधिक खर्च होगा और बचा हुआ पेट में नाना प्रकार की बीमारियाँ उत्पन्न करेगा। पेटू व्यक्ति का मन विषयी काम चिंतन, वासना की तृप्ति की ओर पुनः पुनः भागता है। **अधिक भोजन** वृत्तियों को चंचल, चित्त को विचलित और वीर्य को अपने स्थान से च्युत कर देता है। फलतः मन और तन दोनों विकारपूर्ण बन जाते हैं। ब्रह्मचारी को अपने भोजन पर तीव्र दृष्टि रखनी चाहिए। **आहार की शुद्धि** से सत्त्व की शुद्धि होती है, सत्त्व की शुद्धि से बुद्धि निर्मल और निश्चयी बन जाती है। फिर पवित्र व निश्चयी बुद्धि से मुक्ति भी सुलभता से प्राप्त होती है। जिह्वा वश में करना मन और शरीर को वश में करना है। **सात्विक भोजन** (फलाहार, दुग्धाहार, मधु, तरकारियाँ, मूँग, गेहूँ) इत्यादि के प्रयोग से शान्त रस उत्पन्न होता है, बुद्धि निर्मल रहती है, वासना पर अधिकार रहता है। **राजसी भोजन** (कचौड़ी, पूड़ी, खट्टा, मिर्च युक्त, लहसुन, प्याज, माँस, गाँजा, चाय, भाँग, मादक द्रव्य) से मन कामी,

वासना प्रिय, पापी और रोगी बन जाता है। **तामसी भोजन** (बासी रसहीन चीजें, तेल की तली हुई चीजें, मिठाईयाँ, गरिष्ठ पदार्थ) से वीभत्स रोगादि उत्पन्न होते हैं। जो रस अधिक उग्र होता है, अन्य रस उसी के कब्जे में आ जाता है।

ब्रह्मचारी का भोजन—

भोजन के विषय में ब्रह्मचारी सावधान रहे क्योंकि गलत चुनाव से न केवल बीमारियाँ ही उत्पन्न होंगी, प्रत्युत रक्त विषैला और मन विकारपूर्ण बन जावेगा। प्राणशक्ति का क्षय होगा और आयु कम हो जावेगी।

कामोत्तेजक भोजन कदापि न कीजिये। माँसाहार कामोत्तेजक है। गो माँस, भैंस की चर्बी, भेड़ का दूध, मछली, कछुआ स्वभाव से ही अहितकर पदार्थ है। अधिक गुड़, शक्कर गर्मी उत्पन्न करती है। अत्यंत मिर्च वाला, उष्ण, मीठा, तेल युक्त पदार्थ, प्याज, लहसुन, लाल मिर्च, उरद की दाल, मसाला, चाय, काफी, कोको, पान, तम्बाकू, गाँजा, भाँग, अफीम, चरस, चंडू, तामसी आहार है। ब्रह्मचारी को उन्हें छोड़ देना चाहिए। माँस खाने से आयु क्षीण होती है। अक्सर गठिया की बीमारी हो जाती है, रक्त विकृत होकर फोड़े-फुन्सी निकल आते हैं। माँस तमोगुणी है। शर्करामय पदार्थ हानिकर है।

ब्रह्मचारी को हलका, सादा, सुपाच्य भोजन करना चाहिए। प्राचीनकाल से ही हमारे यहाँ शाकाहार और फलाहार का प्रचार रहा है। ब्रह्मचारी अधिक से अधिक फलों तथा तरकारियाँ प्रयोग करें। हम देखते हैं कि जो पशु-पक्षी प्राकृतिक भोजन करते हैं, वे स्वस्थ और दीर्घजीवी होते हैं। हमारे पुराने आचार्य मिर्च मसालों के पक्ष में नहीं हैं। कच्चा और प्राकृतिक आहार फल, दूध, मेवे, घृत, शहद, तरकारियाँ जैसे—खीरा, ककड़ी, टमाटर, गाजर, अनार, आँवला, मुनक्का, खजूर, छुआरा, फालसा, खिरनी, नीबू, अंजीर विशेष हितकर हैं। अनाजों में लाल शाठी चावल, जौ, गेहूँ, मूँग, मसूर, अरहर, सेंधा नमक ये उत्तम हैं। शाक-तरकारियों में परवल, लौकी, ननुआ, बैंगन, भिण्डी आदि पत्ती वाली सब्जियाँ जैसे पालक,

मेथी, पातगोभी, मूली, मौसमी फलों से रक्त में क्षारता बढ़ती है और अनेक रोग दूर होते हैं। ये सात्विक आहार ब्रह्मचारी के लिये विशेष उपयोगी है। ब्रह्मचारी थोड़ा खाये और जो खाये उसे खूब चबा-चबाकर, कुचल-कुचलकर खाये, लार का अधिकाधिक मिश्रण करे। अधिक खाने वाला कभी वीर्य नहीं रोक सकता।

अनेक व्यक्तियों की यह गलत धारणा है कि खूब दूध, मलाई उड़ाने से नष्ट किया हुआ वीर्य पुनः बन जाता है। यह विचार नितान्त भ्रांत है। वीर्य को बनाने में वही एक मास लगता है। अधिक गरिष्ठ भोजन से शरीर में और भी विकार उत्पन्न हो जाते हैं। धातु के नाश से रक्त के जीवाणु कमजोर पड़ जाते हैं। अतः ऐसा भोजन वीर्य को और उछाल देता है। कुछ मूर्ख दवाइयों के पीछे हाथ धोकर पड़ जाते हैं। कोई भी दवाई तुरन्त शक्ति या वीर्य पुष्टि नहीं प्रदान कर सकती। अधिकतर बाजारू दवाइयाँ ऐसा उत्तेजक गुण रखती है कि उससे खाने वाले को प्रारम्भ में शक्ति आती हुई मालूम होती है किंतु यह क्षणिक होती है। अतः ब्रह्मचारी को इन पौष्टिक दवाइयों से बड़ा सावधान रहना चाहिये। वीर्य तो सादे, सस्ते, स्वच्छ और स्वल्प भोजन से ही मिल सकता है पर संयम की आवश्यकता है। सूखी रोटी भी हमें स्वास्थ्य, बल, उत्साह दे सकती है। यदि हम अन्न में 'ब्रह्म दृष्टि' रखें। ब्रह्म की भावना से हम साधारण भोजन में से प्राणतत्त्व खींच सकते हैं।

व्यसनों को त्याग दीजिए—ब्रह्मचारी को समस्त व्यसनों से दूर रहना चाहिए। क्योंकि इनसे अनावश्यक उत्तेजना उत्पन्न होती है, रक्त में उष्णता बढ़ती है और वीर्य उछल पड़ता है। जितना आज बीड़ी, सिगरेट का प्रचार है इतना शायद कभी भी नहीं रहा। तम्बाकू प्रत्यक्ष विष है। एक विशेषज्ञ की राय है कि—“तम्बाकू के सेवन से उत्तेजित होकर वीर्य पतला पड़ जाता है, पुरुषत्व क्षीण होता है, बिगड़ जाता है, नेत्र ज्योति मन्द पड़ जाती है, मस्तिष्क व छाती कमजोर हो जाती है, खाँसी, दमा, बढ़ते हैं। आलस्य, कार्य में अनिच्छा, हृदय की धकधकाहट, व्यर्थ की चिन्ता व

अनिद्रा बढ़ती है, मुख से बुरी गन्ध आती है। शारीरिक, मानसिक, आर्थिक व सामाजिक भयंकर हानि होती है।”

तम्बाकू कहता है कि “महाराज कलि का मैं दूत हूँ। उन्हीं की आज्ञा से उस पवित्र चातुर्वर्ण्य को जिसे विधाता ने धर्माचरण के लिए बनाया है, बलपूर्वक नष्ट-भ्रष्ट और एकाकार करने के लिए इस संसार में अवतीर्ण हुआ हूँ।”

ब्रह्मचारी को तम्बाकू किसी भी रूप में भूल कर भी नहीं लेना चाहिए। इसके गुलाम बनने से पापों की एक सेना हमारे ऊपर आक्रमण करती है, चरित्र शिथिल हो जाता है और मनुष्य शराबखोरी और व्यभिचार की ओर झुक जाता है, सत्य-असत्य, नीति-अनीति का विवेक नष्ट हो जाता है। अन्य मादक पदार्थों की अपेक्षा तम्बाकू से बुद्धि को अधिक हानि होती है। इन्द्रिय उत्तेजना, स्मरण शक्ति को हानि, चित्त की चंचलता और मस्तिष्क के अनेक रोग उत्पन्न होते हैं। अतः इस कालकूट से ब्रह्मचारी को बड़ा सावधान रहना चाहिए।

शराब तो साक्षात् विष है। शराबी अक्सर व्यभिचारी होता है। उसे धर्म, नीति, सदाचार का ज्ञान कहाँ? शराब की उत्तेजना में मनुष्य पशु से भी बदतर हो जाता है और अपने मनोवेगों का गुलाम बन जाता है। शराब से स्मरण शक्ति पंगु हो जाती है और उसके बिगड़ते ही कल्पना, मनन, विवेचन, ध्यान, निर्णय आदि सूक्ष्म मानसिक शक्तियाँ नष्ट हो जाती हैं, मन अश्लील कल्पनाओं से भर जाता है, स्नायु निर्बल हो जाते हैं और उनकी शक्ति कम होते ही एकाग्रता, चिंतन और निर्णय शक्ति पंगु हो जाती है। चाय को लोग साधारण पेय समझते हैं किंतु साधारण दीखने वाली यह चीज भी दुष्परिणामों से भरी है। इससे जीवन शक्ति का ही नाश नहीं होता प्रत्युत स्नायुओं की क्षणिक उत्तेजना से इसका नैतिक प्रभाव बड़ा व्यापक पड़ता है। जो व्यक्ति अधिक चाय पीते हैं वे प्रायः चिड़चिड़े, क्रोधी, अग्रिमांघ्र और अजीर्ण के शिकार, शारीरिक दौर्बल्य से ग्रस्त रहते हैं। अतः इसे त्याग देना चाहिए।

भाँग, गाँजा, चरस प्राचीनता प्रेमी व्यसनियों की प्रिय वस्तु है। साधु-सन्त, वैरागी मन्दिरों में रहकर इन व्यसनों का प्रयोग करते हैं। ब्रह्मचारी यदि इनकी संगति में बैठे तो उसे उनकी देखा-देखी उन लोगों का अनुकरण न करने लगना चाहिये।

व्यभिचार एक ऐसी सुन्दर और आकर्षक शक्ति वाला दैत्य है जो अपनी सुन्दर मूर्ति से लोगों को मौत के घाट उतारता है। आज समाज में जो विषय लोलुपता दिखाई देती है, जो पापाचार फैला हुआ है, उसका एक कारण उत्तेजक कामवासना को जगाने वाला दूषित साहित्य है। व्यभिचार से सावधान रहने को भी लेखक इस ढंग से लिखते हैं कि पापों से सावधान होने के बजाय उस ओर और प्रवृत्ति होती है। ऐसे पतित साहित्य से ब्रह्मचारी बड़ा सावधान रहे। व्यभिचार के कई कारण हैं। जैसे—घर का गंदा या बुरा वातावरण। बुरी सोहबत, कुसंगति, नौकरों की संगति, दुश्चरित्र पाठक और छात्रालयों के संचालक, सिनेमा, नाटक, समाज की अश्लील गालियाँ, अश्लील गाने, होली, कजली इत्यादि। अनेक व्यक्ति मनोविनोद के लिए कौतूहलवश व्यभिचार के शिकार बनते हैं।

ब्रह्मचारियो! इस पाप से सावधान! इसमें कहीं न फँस जाना, अन्यथा सरदर्द, बदहजमी, रीढ़ की बीमारियाँ, मिर्गी, बहुमूत्र, पक्षाघात, वीर्यपात, स्वप्नदोष, नपुंसकता, क्षय, पागलपन और अन्ततः मृत्यु के शिकार बनोगे। इन सब रोगों का प्रधान कारण वीर्यपात है। वीर्य की रक्षा करो, इन सबसे मुक्त हो जाओगे। अस्वाभाविक वीर्यपात बल, बुद्धि, प्रतिभा, स्वातंत्र्य भावना का नाशक है। अतः सावधान!

गुप्तांगों का शौच—गुप्तांगों के स्पर्श से मन में काम वासना का उद्रेक होता है। अनेक व्यक्ति गुप्तांगों की उचित सफाई नहीं करते, अतः उनमें मैल जमा हो जाता है और खुजली होती है, खुजली करने से इन्द्रियों में उत्तेजना होने लगती है। मन गर्हित विचारों से भर जाता है और गुप्त वासना जाग्रत हो जाती है। जननेन्द्रिय में शरीर की तमाम कोमल नसें इकट्ठी होती हैं अतः उनका शौच ब्रह्मचारी के लिए अति आवश्यक है।

अशुचिस्थानों का स्पर्श न कीजिये, न उसकी ओर दृष्टिपात ही कीजिए अन्यथा मन में वासना का उद्रेक हो जायेगा। काम रिपु जाग्रत होने पर आप अपने को न सम्हाल सकेंगे। गुप्तांगों को देखने मात्र से ही वासना का तांडव प्रारम्भ हो जावेगा क्योंकि गन्दे विचारों से इन्द्रियाँ क्षुब्ध हो जावेंगी। स्नान करते समय साबुन से, सफाई से धो डालिये, शौच के समय भी स्वच्छता से धो डालने की आदत बनाओ। मैल एकत्रित न होने दीजिए। हमारे पूर्व पुरुषों, ऋषि-मुनियों ने मूत्र त्याग के समय तक जल ले जाने की आज्ञा दी है। इसका उद्देश्य यही है कि मूत्र त्याग के पश्चात् इन्द्रिय स्नान करा दिया जाय। मूत्र के कण उसमें न लगें। मलमूत्र त्यागने के पश्चात् स्वच्छता से हाथ-पाँव धोने चाहिए। शौच क्रिया में काफी पानी ले जाइये। गुप्त इन्द्रिय की त्वचा में मल एकत्रित न हो जाय, यह ध्यान रखिये। ठण्डे जल से गुप्तेन्द्रिय को स्नान करा देने से मन शान्त हो जाता है। समस्त वासनाएँ दब जाती हैं और मन पर काबू हो जाता है।

ब्रह्मचारी को उचित तो यही है कि टट्टी के पश्चात् स्नान करे किंतु यदि यह सम्भव न हो तो कम से कम वस्त्र बदल लेना चाहिए। मिट्टी से हाथ धोने के पश्चात् पुनः एक बार साबुन से स्वच्छता पूर्वक हाथ धोने चाहिए। मूत्र त्यागने के पश्चात् ठण्डे जल से इन्द्रिय स्नान अवश्य करना चाहिए। इसके द्वारा आप अपने विकार, आसुरी विचार, मनोवेगों, राक्षसी कल्पनाओं को वश में कर सकेंगे। ब्रह्मचारी को इन्द्रिय स्नान, स्वच्छता और गुप्तांगों की उचित सफाई का ध्यान रखना चाहिए। सत्यव्रत जी लिखते हैं “जननेन्द्रिय को परब्रह्म की उत्पादक शक्ति का चिन्ह समझना चाहिए। उसकी ओर जाते ही दैवी भावों का उदय होना चाहिए। इन्द्रिय स्पर्श कभी न करना चाहिए। ऐसे कार्य की ओर कभी भूलकर भी ध्यान नहीं देना चाहिए जिसे खुले करते हुए हृदय में पाप की लज्जा तथा भय की आशंका होती है। ऐसा कार्य सदा पापमय होता है। यही पाप की पहचान है। इस समय हृदय में परमात्मा की मातृशक्ति का ध्यान करते रहना चाहिए।”

आपके शरीर का प्रत्येक अंग पवित्र हेतु से बना है। उसमें दैवी शक्तियों का अस्तित्व है। गन्दगी के लिए कहीं भी गुंजायश नहीं रक्खी गई है। इन्द्रियों की स्वच्छता पर मन की स्वच्छता, आत्मा की स्वच्छता निर्भर है। इन्द्रिय, अंग-प्रत्यंगों की अशुचिता का स्पष्ट परिणाम निंद्य वासनामय विचार, कुत्सित कल्पनाओं की वृद्धि और अन्ततः वीर्य नाश है।

गुह्येन्द्रिय को हर प्रकार से स्वच्छ रखना सीखिये। उसे शीतल जल से मल-मूत्र त्याग के पश्चात् धोया कीजिए। इन्द्रिय स्पर्श के समय ब्रह्मचारी अधिक घर्षण न करे अन्यथा उत्तेजना होनी सम्भव है। ठण्डे जल से इन्द्रिय स्नान कराने से सब नसों में शीतलता रहती है, इन्द्रियों की चंचलता नष्ट होती है और मन शान्त और उत्फुल्ल रहता है। चूँकि वासना का संबंध गुह्येन्द्रिय से है, अतः उसके शौच, स्वच्छता, निर्मलता की बड़ी सावधानी रखनी चाहिए।

शरीर को बलवान बनाइये—बलवान शरीर आध्यात्मिक उन्नति और ब्रह्ममय जीवन के लिए अत्यंत आवश्यक है। बलवान शरीर से आत्मा बलवान बनती है। मन प्रसन्न रहता है और मनोद्वेगों को रोकने, चित्तवृत्ति के निरोध करने में सहायता मिलती है। बलवान व्यक्ति, काम के दैत्य भावों, पाशविक वृत्तियों, वासना और दूषित विकारों का दृढ़तापूर्वक दमन कर सकता है। कमजोर व्यक्तियों को कामदेव पटक-पटककर मारता है। आसुरी विचार नाच नचाते हैं, मन चंचल रहता है। उसके विकार बलवान होते हैं और इच्छा शक्ति पंगु बन जाती है।

उच्च और पवित्र दिशाओं में चित्त वृत्तियों को एकाग्र करने के लिए ब्रह्मचारी का बलवान शरीर चाहिए। ब्रह्मचारियो ! मजबूत बनो, अंग-अंग को व्यायाम से दृढ़ करो, अणु-अणु में जीवन शक्ति भर लो। शक्तिशाली ब्रह्मचारी के पास मन को चंचल करने वाला, अंतस्थल को अशान्त करने वाला, प्रचंड विकारों के वशीभूत करने वाला कोई मानसिक राक्षस नहीं आ सकता।

अपनी परिस्थिति, शक्ति और हैसियत के अनुसार प्रत्येक ब्रह्मचारी व्यायाम चुन ले। सूर्य नमस्कार, प्राणायाम, आसन, दण्ड बैठक, डम्बल, तैरना, कूदना, श्वास-प्रश्वास की कसरतें चुन लेनी चाहिए। सूर्य नमस्कार के व्यायामों द्वारा सूर्य की रश्मियों द्वारा प्राण तत्त्व हमारे फेफड़ों में प्रवेश करता है। श्वास-प्रश्वास द्वारा फेफड़ों की अच्छी कसरत हो जाती है। प्राणायाम द्वारा आनंद, बल, नवस्फूर्ति मिलती है। आलस्य में न रहें। जो कुछ भी हो सके थोड़ा बहुत व्यायाम अवश्य करें। जो सारे दिन आलस्य की केंचुली में बन्द पड़ा रहेगा, वह भला किस प्रकार ब्रह्मचर्य स्थित रख सकता है? ब्रह्मचारी तो स्वस्थ, कुशाग्र, बुद्धिमान, स्फूर्तिवान् होता है। शारीरिक बल से उसे आत्मबल प्राप्त होता है।

नियमित व्यायाम करने से हमारी समस्त नीच इन्द्रियाँ फीकी पड़ जाती हैं और पाप वासनाएँ तत्काल दब जाती हैं। रक्त का प्रवाह प्रत्येक अंग में तीव्र गति से होने लगता है। नियमित व्यायाम करने वाले पहलवान पूर्ण शान्त, निर्विकारी, ब्रह्मचारी और दीर्घजीवी रहते हैं। **व्यायाम आत्मोद्धार का गुप्त उपाय है।** इस अमृत संजीवनी का उचित प्रयोग होना चाहिए।

ब्राह्म मुहूर्त से लाभ उठाइये—कवियों ने ब्राह्म मुहूर्त को लेकर मधुर कल्पनाएँ की हैं—प्रातःकालीन सुखद समीर सुरम्य सरोवरों, ऊषा की रस भरी आभा और स्वर्णमयी रश्मियों की थिरकन के जो गीत गाये हैं, वे नितान्त सत्य हैं। सूर्योदय का आगमन जीवन, बल, आशा, उत्साह, नवजीवन का द्योतक है। सूर्य भगवान की प्रथम किरण के स्पर्श मात्र से समस्त प्रकृति गद्-गद् हो चारों ओर सुगंधित सौरभ, मतवाली महक अलौकिक आनन्द, सुमधुर गुंजन, अनूठी कांति बिखेरती फिरती है।

चाणक्य नीति में कहा है, “सूर्योदय के समय सोने वाले, चाहे वह चक्रधारी विष्णु ही क्यों न हो, लक्ष्मी छोड़ देती है।” संसार के प्रायः सब दीर्घजीवी महापुरुष बड़े-बड़े योगी, मुनि, तपस्वी सूर्योदय से पूर्व

ब्राह्ममुहूर्त में उठने के अभ्यासी थे। बाल सूर्य की प्रथम रश्मियों को नेत्र पर लेना, सूर्य को अर्घ्य देना, सूर्योदय के समय दर्शन करना इसी महत्ता के द्योतक हैं। इस मंगलमय समय को ब्राह्ममुहूर्त कहा गया है। ब्राह्ममुहूर्त सूर्योदय से डेढ़ घण्टे पूर्व होता है। ब्रह्मचारी को ब्राह्ममुहूर्त में शय्या त्याग कर शौचादि नित्य कर्मों से निवृत्त होना अनिवार्य है। कहा है—

ब्राह्मे मुहूर्ते बुध्येत स्वास्थ्यो रक्षार्थं मायुषः ।

तत्र दुःखस्य शान्तर्थे स्मरेद्धि मधुसूदनम ॥

अर्थात्—“**स्वस्थ मनुष्य को चाहिए कि वह अपने जीवन की रक्षा के निमित्त ब्राह्ममुहूर्त में उठ जाय तथा दुःखनाश के लिये भगवान का भजन करे।**”

ब्रह्मचारी को जल्दी सोने और जल्दी उठने का अभ्यास होना चाहिये। प्रातःकाल आलस्य में बिस्तर पर पड़े रहने से अनेक प्रकार की कुत्सित वासनाएँ हमें अशान्त कर देती हैं, मनोवृत्तियाँ अनुचित मार्गों की ओर आसानी से प्रवृत्त हो जाता है। कामवासना प्रायः ऐसे ही व्यक्ति को तंग करती है, जो आलस्य में अधजगे शय्या पर पड़ा रहता है। काम, क्रोध, आलस्य, निद्रा, मैथुन—इनमें ज्यों-ज्यों अधिक फँसो, त्यों-त्यों ये अधिकाधिक सताते हैं। स्वामी शिवानन्द जी ब्राह्ममुहूर्त के विषय में लिखते हैं— “प्रातःकाल को अमृत वेला कहा गया कहते हैं। सचमुच सृष्टि के इस प्रातःकालीन दिव्य अमृत को त्यागने वाला पुरुष जल्दी ही वृद्ध एवं मृत के तुल्य हो जाता है। हमारे ऋषि-मुनि इसी अमृत का नित्यशः ब्राह्ममुहूर्त में यथेष्ट सेवन कर इतने चंगे और चैतन्यमय बने हुए थे, रातभर के आराम के कारण प्रातःकाल में सम्पूर्ण शक्तियाँ अत्यन्त सतेज और बलिष्ठ रहती हैं। ऋषि ब्राह्ममुहूर्त में उठकर सर्वप्रथम शक्तिमान परमात्मा का ध्यान करते थे, जिससे परमात्मा की शक्ति प्रवेश करती थी और बड़े-बड़े राजा भी उनके सामने सिर झुकाते थे। यदि हम चाहते हैं कि हमारे सम्पूर्ण काम, क्रोध, अन्तर्बाह्य शत्रु हमारे सामने सिर झुकावें और संसार में हमारी कीर्ति हो तो हमें प्रातःकाल उठने का अभ्यास डालना चाहिये।”

पाश्चात्य विद्वानों का मत है कि रात्रि में मनुष्य अपनी दूषित वायु— कार्बोनिक एसिड गैस को बाहर फेंकता है और इसी दूषित वायु को ग्रहण कर वृक्ष प्राणवायु—आक्सीजन को छोड़ा करते हैं। अतएव ऐसे समय शुद्ध वायु प्राप्त होती है। इस स्वस्थ वायु से सब दिशाएँ व्याप्त होती है और वह श्वासोच्छ्वास द्वारा फेफड़ों में जाकर फेफड़ों के समस्त विकारों को दूर कर शरीर में प्राण संजीवन कर हमें नीरोग रखता है।

ब्राह्ममुहूर्त की वायु में बुद्धि विकास का परिणाम अधिक मात्रा में विद्यमान रहता है, रक्त की स्वच्छता एवं गति बढ़ जाती है और मस्तिष्क पुष्ट बनता है। सर वाल्टर स्काट का कथन है कि प्रातःकालीन वायु स्मरण शक्ति और कल्पना शक्ति में आश्चर्यजनक तीव्रता एवं सजगता उत्पन्न करती है। नए-नए विचार पैदा कर उल्लास, उत्साह और उत्फुल्लता की अभिवृद्धि करती है।

इस शरीर का आत्मा से क्या सम्बन्ध है? सब जीवों के साथ परमात्मा का क्या सरोकार है? शय्या से उठते ही पहले इस तत्त्व पर मन केन्द्रीभूत कीजिए। तत्पश्चात् जगत में कल्याण भरा है, यह सोचिए। फिर शौचादि से निवृत्ति हो पूजन, भजन, गीतापाठ कीजिए। फिर जो ॐ भूर्भुवः स्वः इन तीनों को प्रकाशित करने वाले और चैतन्य का विकास करने वाले, उन परम देव परमेश्वर का स्मरण करते हुए घूमने निकल पड़िए। आपकी मुख की कांति द्विगुणित होगी, बुद्धि का विकास होगा। पवित्र विचार, पवित्र रक्त और पवित्र चिंतन से आप में नई स्फूर्ति का संचार होगा। मन के वासनापूर्ण इच्छाएँ, चंचल मनोवृत्तियाँ नष्ट हो जायेंगी।

प्रातःकाल जल्दी उठने के लिए यह आवश्यक है कि जल्दी ही सोया जाय। **बारह बजे के पहिले की एक घंटा नींद बाद के दो घंटों के बराबर होती है।** ब्रह्मचर्य रक्षा के लिए दस बजे, उससे पूर्व ही सो जाएँ और प्रातःकाल चार बजे शय्या त्याग कर दें। प्रातःकाल हम आलस्य में पड़े रह जाते हैं तो स्वप्नदोष हो जाता है। स्वप्नदोष अंतिम पहर में होता है। मूत्र त्यागने में जहाँ आलस्य हुआ कि स्वप्नदोष हो जाता है। अतः चार

बजे ही उठ बैठना चाहिए। जो व्यक्ति ब्राह्ममुहूर्त में पड़े-पड़े खुराटे लेते हैं; अल्पायु, आलसी, दरिद्र, हठी और बुरे विचार वाले बनते हैं। ब्रह्मचारी का सोना-जागना नियमित होना चाहिए। प्रातःकाल उठकर मन में इस प्रकार के भाव रखने चाहिये—

“गर्हित वासनाएँ, कामोत्तेजक विचार धाराएँ मेरी मनःशान्ति को भंग नहीं करतीं। सांसारिक माया, मोह, प्रपंच, व्यर्थ के विषयों में फँसकर मैं अपने हृदय की शान्ति को नहीं खोता। मेरा मन स्वस्थ है, चित्त समतुल्य है, हृदय में भक्ति-प्रेम और शान्ति का स्रोत खुल गया है। मोह, काम, शंका, भय, शोक और वासना की तरंगें मेरे मानस सरोवर में अन्तर्द्वन्द्व नहीं मचा सकतीं। मैं उद्वेग और मनोवेगों पर पूर्ण नियंत्रण रखता हूँ।”

कोई पवित्र भजन गुणगुनाते हुए उठिये। अपने आपको वीर्यवान् होने के संकेत दीजिए। यदि हम अपने आपको वीर्यवान् कहेंगे, समझेंगे वैसा ही उच्चारण करेंगे और वैसा ही अभिनय करेंगे तो हम अनायास ही वीर्यवान् बनते जायेंगे। अतः इसी प्रकार का भाव हमें प्रातःकालीन स्तुति प्रार्थना में लाना चाहिए। ब्रह्मचारी को प्रातःकाल उठते ही दो-चार भजन अत्यन्त प्रेम से गाने चाहिए। उत्तमोत्तम भक्तिपूर्ण पदों का पाठ करने से दैवी तेज प्रकट होता है और समस्त दुश्चिन्ताओं का नाश होता है। अतः आप ब्रह्मचर्य-धारण का दृढ़ संकल्प मन में रखकर शुभ संकल्प से अपना दिन प्रारम्भ किया कीजिये। ये पवित्र भजन शिव संकल्प, शुभ भावना, स्थूल रूप में मूर्तिमान् होकर प्रकट होंगे। हम अपने गुप्तमन में जिन चित्रों की सृष्टि करते हैं, वे व्यवहार में स्थूल रूप में प्रकट होते हैं। इसलिए वेद में कहा गया है—“साधको! तुम्हारी कल्पना सदा सर्वदा शिव संकल्पमयी हो ‘तन्मे मनः शिव संकल्पमस्तुः’। अपने अन्तःकरण में पवित्र अनन्त स्वरूप परमात्मा के मानसिक चित्र की रचना किया करो।”

कामवासना को भूखा मारिये—उपवास आत्मशुद्धि का सर्वोत्तम उपाय है। आयुर्वेद में कहा है, ‘अग्नि आहार को पचाती है और उपवास दोषों (वासना, कुत्सित कल्पना, आंतरिक विकार) को पचाता अर्थात् नष्ट

करता है।' उपवास हमारे शरीर का एकत्रित मल निकालता है, मानसिक मल भी दूर होता है। जब हम अनेक प्रकार के भोजनों से उदर को भर लेते हैं, तो मन की चंचलता और बढ़ जाती है। भरे पेट पर हमें शरारत की सूझती है। प्रकृति ने दोष निवारण की जो विधियाँ निकाली हैं, उपवास उसमें सर्वोत्कृष्ट है। उपवास की रोग तथा मन का मैल दूर करने की शक्ति पर प्राचीन ऋषि-मुनियों को बड़ी श्रद्धा थी। अब धीरे-धीरे लोग उपवास के महत्त्व को मानने लगे हैं।

ब्रह्मचारी के लिए मास में दो उपवास (एकादशी) यथेष्ट हैं। ब्रह्मचारी आलसी नहीं होता। सदैव काम-काज, भजन-पूजन में निरत रहता है। इससे शरीर में गन्दगी कम इकट्ठी होती है किन्तु फिर भी मास में दो उपवास अतीव आवश्यक है। अनेक व्यक्ति यह समझते हैं कि उपवास प्रारम्भ करने से पूर्व खूब भोजन किया जाय और उपवास तोड़ने पर फलाहार के साथ-साथ मिठाई, रबड़ी इत्यादि गरिष्ठ पदार्थ लिये जाय। यह धारणा नितान्त मूर्खतापूर्ण है। जब आप कोष्ठ शुद्धि अथवा आत्म-शुद्धि कि निमित्त उपवास करते हैं, तो भोजन ठूँसने से क्या लाभ? उपवास करने का मुख्य आशय तो इन्द्रियों की प्रबलता एवं चंचलता नष्ट करना है। अतः भोजन खान-पान के बखेड़े से दूर रहकर ब्रह्मचारी को अपना अधिकांश समय आत्मचिंतन में लगाना चाहिए। किसी ग्रन्थ का अध्ययन करें, साधु-महात्माओं का सत्संग करे या स्वास्थ्य रक्षा के लिये किसी रमणीय प्राकृतिक स्थान में टहलें। सिनेमा, ताश, शतरंज या नाच-गाने में व्यर्थ समय नष्ट न करे। उपवास के समय मानसिक स्थिति शान्त, धर्मरत रहनी चाहिये। यदि ब्रह्मचारी किसी भय एवं चिन्ता के कारण उपवास नहीं कर सकता तो उपवास न करना ही उत्तम है। उपवास के समय चित्तवृत्ति उच्च विषयों पर एकाग्र करना चाहिए, अपनी शक्तियों का कम से कम क्षय करना चाहिए। साधारण उपवास में थोड़ा-थोड़ा पानी पीते रहना चाहिये। प्यास के अनुसार पानी की मात्रा में न्यूनाधिक परिवर्तन करना चाहिए। निर्जल उपवास शरीर की गन्दगी को बहुत तेजी से निकालता है किन्तु यह अपेक्षाकृत कठिन है।

जल का प्रयोग अनेक दृष्टियों से उत्तम है। उपवास के साथ प्राणायाम, कसरत, मालिश, धूप से स्वास्थ्य सुधारना चाहिये।

प्राणायाम किया कीजिये—मन तथा इन्द्रियों को पवित्र व स्थिर करने के लिए प्राणायाम अद्वितीय है। प्राणायाम से रोगी भी निरोगी और पतित व्यक्ति भी ब्रह्मचारी बन सकता है। मनुस्मृति में लिखा है—“जैसे अग्नि में तपाने से स्वर्ण आदि धातुओं का मल नष्ट होकर शुद्ध हो जाता है, वैसे ही प्राणायाम करने से मन आदि इन्द्रियों के दोष क्षीण होकर निर्मल हो जाते हैं।” प्राणायाम से मन की अवस्था शान्त और स्थिर हो जाती है और चित्त की वृत्तियों का निरोध हो जाता है। इस अवस्था में ब्रह्मचारी को जो आनन्द होता है, वह अवर्णनीय है। यदि आप ब्रह्मचर्य स्थिर रखना चाहते हो तो प्राणों पर काबू करने के लिये प्राणायाम अवश्य कीजिये।

प्राणायाम से अनेक लाभ हैं। मन और चित्त की वृत्ति का निरोध होकर ज्ञान प्राप्त होता है, आयुष्य की वृद्धि होती है, सूक्ष्म और स्थूल दोनों प्रकार के शरीरों का विकास होता है, इन्द्रियों पर बहुत शीघ्र विजय प्राप्त होती है, वीर्य ऊर्ध्वगामी और अमोघ हो जाता है, धारणा शक्ति का विकास, दिव्य बुद्धि की प्राप्ति और विषय-वासना का नाश होता है। शारीरिक विकार दूर होकर मन हलका हो जाता है।

प्राणायाम तीन प्रकार का होता है—पूरक, कुम्भक और रेचक। पूरक अर्थात् शरीर में शुद्ध वायु पूर्ण रूप से भरना। शुद्ध वायु के भरने से रक्त पवित्र होता है, प्राणवायु से नवजीवन प्राप्त होता है। कुम्भक का अर्थ है—फेफड़ों में भरी हुई वायु को स्थिर रखना और रेचक का अभिप्राय है हवा को धीरे-धीरे बाहर निकालना। इन तीनों क्रियाओं का मतलब यही है कि हम श्वास-प्रश्वास की क्रियाओं को करें, फेफड़ों में धीरे-धीरे हवा भरें। उसे कुछ देर तक अन्दर रखें, स्थिर रखें और तत्पश्चात् धीरे-धीरे बाहर निकालें। इन क्रियाओं से दूषित वायु बाहर निकलेगी और शुद्ध वायु से

फेफड़े अपना कार्य अच्छी तरह कर सकेंगे। नासिका के एक स्वर से वायु भरना और दूसरे से निकालना भी अत्युत्तम है। पूरक, कुम्भक और रेचक तीनों मिलकर प्राणायाम हुआ। यह क्रिया बार-बार होनी चाहिए।

प्राणायाम से आत्मबल बढ़ता है और विचारों से सात्विक भावनाएँ उठने लगती हैं, मस्तिष्क की थकान दूर हो जाती है। आत्मज्योति जाग्रत होने लगती है और वीर्य शुद्ध बनता है। प्राणायाम से ब्रह्मचर्य की रक्षा होती है। अतः दीर्घायु, निरोग, ब्रह्मचारी और सामर्थ्य सम्पन्न बनने के लिये प्राणायाम की प्रचंड शक्ति को अपनाइये।

उद्योगी बनिये— आलस्य जीवन का मैल है। काम में आने वाला औजार चमकदार रहता और अधिक चलता है। उसी भाँति जो ब्रह्मचारी सदा उद्योग में प्रवृत्त रहता है, व्यर्थ गप-शप में, निन्दा, पर छिद्रान्वेषण में अपना समय नहीं लगाता, वह काम वासना को दमन कर सकता है। ऐसे उद्योगी व्यक्ति के पास वासना पूर्ति के लिये समय ही कहाँ? आलसी व्यक्ति को कामदेव पटक-पटक कर मारता है। किन्तु जो सदा सद्कर्मों में प्रवृत्त रहता है, आलस्य को मार भगाता है, वह निरन्तर प्रगतिवान् रहता है। निरुद्योगी पुरुष कभी ब्रह्मचर्य धारण नहीं कर सकता, सतत् उद्योगी अपनी कांति, सुगन्ध से सबका मन मोह सकता है। उद्योग से नीच वासनाएँ स्वयं दब जाती हैं।

ब्रह्मचारियो! अपने जीवन का एक पल भी व्यर्थ बर्बाद न करो। कुछ-न-कुछ करते रहो। आलसी मस्तिष्क शैतान का पिटारा बन जाता है। उद्योगी के पास आलस्य नहीं फटक सकता। वह जगत् का कल्याण भी कर सकता है, साथ ही समाज सेवा, जनता में धर्म प्रचार भी पर्याप्त रूप से कर सकता है। वह निकम्मा न रहे, अपने जीवन के प्रत्येक पल का सदुपयोग करे, उद्योगी बने।